बाल ब्रह्मचारी राजर्षि भीष्मपितामह

का

सम्पूर्ण जीवन चरित्र

यह पुस्तक अपूर्व संशोधन के लिये जो इस के बनाते किया गया है अद्वितीय पुस्तक है। बहुत काल की खोज और परिश्रम के पश्चात् युक्तियों और प्रमाणों द्वारा यह किया गया है कि भीष्मपितामह जी की माता गंगा नदी न और व्यास देव ऋषि पराशर के पुत्र न थे और न ही उ ने चित्रांगद की रानियों से नियोग किया जिस से पाप की उत्पत्ति हुई और न ही ऋषि पराशर और सत्यवती कुछ सम्बध हुआ था तात्पर्य यह कि यह पुस्तक सत्य भण्डार है, युद्ध का हृ पट्ट [सत्य सत्य] दृश्य दिखाने वा दर्पण, शूरता और दृढ़ता के जीवन चरित्र दिखाने वाला शा नीति और उपदेश का कोश और संसार की स्थिति भ्यानक दृश्य-

मुल्य ॥)

मिलने का पता

ठाकुर सुखराम दास चोहान.

बेरुन लुहारी गेट लाहौर ॥

॥ ओ३म् ॥

हनुमान जी का जीवन चरित।

द्वितीय भाग

३४वां अध्याय।

बदला लेने का विचार।

दोहा—प्रभु सिमरण परिणाम है, देखो परम अनूप।
जन समुदाय निरासता, धारे आशा रूप ॥

आषाढ़ का मास है मध्यान का समय है जब कि सूर्य भगवान सृष्टि को अपने प्रबल वेग से तपा रहे हैं, और उस की तीव्र किरणें भूमि से मिल रही हैं, मनुष्य तो क्या पशु भी इस समय ताप से व्याकुल हो रहे हैं, जो वस्तुएं सूर्य के विरुद्ध जीवों की रक्षा के लिये कटिबद्ध हैं, वह बस्तियों में तो गृह मन्दिरादि हैं, और बनों में वृक्ष हैं यद्यपि सूर्य ने उन को भी अपने संतप्त वायु रूपी थप्पड़ मार २ कर उन को निज धर्म्म छुड़ाने का यत्न किया, परन्तु महात्मा पुरुषों के समान उन्हों ने अपने मन में दृढ़ प्रतिज्ञा करली है कि जब तक हम में प्राण हैं उपकार को नहीं छोड़ेंगे, और इन की दृढ़ प्रतिज्ञा देख प्रकृति माता ने भी सूर्य्य को काल बंधन में ऐसा जकड़ा कि वह निराश हो कर पश्चिम में जा छिपा ॥

अब दिन का चौथा पहर है, जब कि सब जीव फिर

अपने २ कामों में लग गये हैं और वह सब पशु पक्षी गण जो थोड़ा समय पहिले अपने २ घोसलों में दबके पड़े थे अब इधर उधर फिरते हुए दिखाई देते हैं, ऐसे समय में हमारा विचार जिधर जाता है वह ऋष्य मूक पर्वत की वह समतल भूमि है जो किष्किन्धा नगर से थोड़ी दूर पूर्व की ओर वर्तमान है, और जहां एक सामान्य सा मन्दिर बना हुआ है, जिस को आज कल के समय के अनुकूल एक झोंपड़ी कहें तो अनुचित नहीं, इस के चारों ओर परम सुन्दर हरित वृक्ष लह लहाते हुए देख पड़ते हैं, जिन पर नाना भांति की बेलें चढ़ी हुई इसकी शोभा को और भी बढ़ा रही हैं, इन बेलों के भांति २ के बसन्ती ऊदे, हरित और श्वेत फूल कैसे दिव्य हैं, यद्यपि यह दिन की धूप के अत्याक्रमण से किञ्चित मुर्झाये हुए हैं, परन्तु फिर भी मनुष्यों के मन को मोहित कर रहे हैं, इस मन्दिर के ठीक सन्मुख एक चबूतरा है जो धरातल से लग भग एक हाथ ऊंचा है, इस पर कुछ मनुष्य चकित से हो सिर झुकाये वार्तालाप कर रहे हैं, इन में सब से अधिक चिन्तातुर जो प्रतीत होता है वह राज्य वंश का एक युवक है, और जिस से यह वार्तालाप कर रहा है वह भी बली और नम्रभाव होने से इसी के तुल्य प्रतीत होता है, परन्तु अब तक तो सुख शांति है ॥

आहा ! इस प्रथमोक्त युवक का बार २ हाथ उठा

आकाश की ओर देखना और माथे पर हाथ लगा कर ठण्डी सांस का भरना श्रोतः के मन को कम्पायमान कर व्याकुलता के समुद्र में डुवा रहा है। इन चिन्हों को देख हम से भी रहा न गया, और इन की वार्तालाप श्रवण की लालसा से और अपना प्रण पूर्ण करने के अर्थ (जो प्रथम भाग में अपने पाठकों को सुना चुके हैं) आगे बढ़े, आहा! यह तो हमारा वीर हनुमान है, और वह शूरवीर इस का श्वसुर सुग्रीव है। जो अपने भाई बाली के अत्याचार से दुःखित हो घरघाट छोड़ वरञ्च परम प्रिय जीवन से भी हाथ धो छिप कर यहां आ बैठा है, और इस समय हनुमान से कह रहा है, कि "क्या करूं, कुछ समझ में नहीं आता, कि मुझे अब क्या करना चाहिये, तुम को यहीं पर आने का इस लिये कष्ट दिया था कि तुम ही मेरी सहायता करोगे परन्तु हा खेद! मेरा विचार झूठा निकला, तुम भी उस के सन्मुख होने की शक्ति नहीं रखते॥

हनुमान—(कुछ सोचने के अनन्तर) यदि यही बात है तो मैं राजा रावण से सहाय प्रार्थना क्यों न करूं, पूर्ण निश्चय है कि वह मुझे निराश न करेगा॥

सुग्रीव—क्या कहा? रावण वह तो बाली के नाम से कांपता है, युद्ध करना तो कहीं रहा, यदि मान भी लें कि आप लोगों की सहायता से उसे दमन भी करले तो मुझे सिवाय सफल कार्य्य होने के और क्या प्राप्त होगा?

क्या आप को विदित नहीं कि वह कैसा व्यभिचारी मनुष्य है, समस्त सृष्टि में उसका कोलाहल मचा हुआ है, अभी थोड़े दिन ही व्यतीत हुए हैं कि वह कई एक स्त्रियों को बल से पकड़ कर लाया था, कोई ऐसा पुरुष नहीं जो उस के अत्याचार से दुःखी न हुआ हो परन्तु वह दीन कर ही क्या सक्ते हैं ? और उन की पुकार सुनने वाला भी कौन है ? दूर कहां जाते हो, इन्हीं दिनों का वर्णन है कि मैं यहीं बैठा अपनी आपत्ति को याद कर ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि अचानक एक स्त्री के रोने चिल्लाने का शब्द आकाश मार्ग से मेरे कानों में पड़ा ज्यूंही सिर उठा कर देखा तो उसी दुष्ट को पाया, कि एक सुन्दरी स्त्री को विमान में बैठाये लिए जा रहा है, पता नहीं कि उस स्त्री ने क्या सोच कर यह वस्त्र (अंगुली से दिखला कर) जिस में कुछ भूषण भी बंधा था, नीचे फैंक दिया, इस दशा में क्या तुम समझते हो कि मेरी स्त्री जो अद्वितीय स्वरूपा है छोड़ जावेगा, नहीं ! कभी नहीं ! वरंच वह उसे देख मेरे रुधिर का प्यासा हो जावेगा" ॥

सुग्रीव अभी अपने कथन को समाप्त भी नहीं करने पाया था कि दो पुरुष धनुषधारी सामने से उस की ओर आते देख पड़े, जिन को देख कर वह विस्मित सा हो गया, और चकित हो हनुमान से बोला ॥

"देखो तो वह सन्मुख कौन आ रहे हैं । कृपा करके शीघ्र जाकर देखो कि कहीं बाली के गुप्तचर तो नहीं ॥

३५वां अध्याय

ईश्वरीय सहायता ॥

ईश्वर जिसे स्वरूप दे क्या भूषण का काम ।
देखो शोभा चंद्र की नहीं भूषण का नाम ॥

देखो ! वह कैसा सुंदर दर्शनीय युवक है, वह समस्त गुण जो कि शूरवीर सेना पति में होने चाहियें वह सब इस में विद्यमान हैं, यद्यपि लक्ष्मण जी मुनि वेश धारी हैं, अर्थात मृगछाला ओढ़े जटाजूट धारी हैं, परंतु धनुष को कैसी विचित्र रीति से कंधे पर धरे हैं, अनुमान से विदित होता है कि इस समय इन के नेत्र किसी को ढूंढ रहे हैं, ओहो । इन के साथी श्री महाराज रामचंद्र जी की ओर तो देखो, यद्यपि इन का वर्ण लक्ष्मण जी से सांवला है, नहीं २ श्याम, परंतु अतीव मनोहर है, इन के मुख को देखने से तो मन ही नहीं भरता, नेत्रों की कृष्ण वर्ण पुतली फिरने का नाम ही नहीं लेती, निस्संदेह गूदड़ी में भी लाल छिपे नहीं रहते, देखने में तो सिर पर जटाजूट, कंधे पर मृगछाला ओढे हैं, परंतु इन का विशाल मस्तक, प्रसन्न मुख, मृग सरीखे नेत्र देखने वाले के मन की चञ्चलता को स्थंभन कर देते हैं, इन का दिव्य रूप कुंदन के समान चमक रहा है, श्री पिता जी की चिंता, सम्बंधियों का विछोड़ा, पड़ोसियों का वियोग और प्रिय पत्नी जी के ऐसे निर्जन वन में यकायक लुप्त

होजाने पर भी, इस धर्म्म बीर की आकृति में किञ्चित विपर्य्य प्रतीत नहीं होता, पाठक गण! आप चकित होंगे कि रामायण के कर्त्ताओं ने तो श्री रामचन्द्र जी की अवस्था शोकास्पद व चिंता युक्त वर्णन की है, तो फिर हम यह क्या लिख रहे हैं, नहीं २ यह उन की भूल है और उस महात्मा की प्रतिष्ठा में एक कलंक है, क्योंकि श्री महाराज रामचन्द्र जी में एक शक्ति काम कर रही थी जिस ने उन को किसी अवस्था में भी अकृतकार्य व मुखारविन्द की झलक को विकाशित नहीं होने दिया। वह शक्ति पवित्र वेद का यथार्थ ज्ञान था, यद्यपि उन को हजारों आपत्तियें झेलनी पड़ीं परंतु उन्हों ने क्षण मात्र के लिये भी धर्म्म नियमों का त्याग नहीं किया वरंच अपना कर्म्म काण्ड निरंतर करते रहे जिस की साक्षी रामायण से भी मिलती है, तो फिर हम क्योंकर आशा कर सकते हैं कि वह मनुष्य जो संसार में इतनी महत्वता प्राप्त करे कि ईश्वर का अवतार माना जाये, वह कामिक बुधि के आधीन हो और बावलों के सदृश लज्जा युक्त वचन कहता चिल्लाता और रुदन करता फिरे, इस विषय में ग्रंथ कर्त्ताओं की भूल है कि जिन्हों ने अपने पुस्तकों को मनोहर बनाने के लिये ऐसी कथायें वर्णन करदी हैं। महाराज रामचंद्र जी तनिक भी नहीं घबराये वरंच अतीव गंभीरता से सीता महारानी को ढूंडते रहे चूंकि

हमारा विषय यहीं तक नहीं निबद्ध है, इस लिये इस विषय का यहीं तक वर्णन कर प्रकृत अनुसरण करते हैं ॥

श्रवण करो ! लक्ष्मण जी क्या कह रहे हैं ।

लक्ष्मण-(ठण्डी सांस लेकर) "हे जनक दुलारी ! तू ने संसार के समस्त ऐश्वर्य को त्याग कर इस वन में हमारा संग स्वीकार किया था, आज विदित नहीं कि तू किस दशा में और किस स्थान में है, हाय ! वह कैसा बुरा समय था जब कि तू मुझ को श्री रामचन्द्रजी की सहायता के लिये जानेको उकसाती थी, हा ! मैंने भी किञ्चित् विचार न किया, तेरी आज्ञा को शिरोधार्य्य कर उस माया की ध्वनि पर चला गया, ओह ! मैं आप ही दुर्भाग्य दुर्बुद्धि हूं जो मान्यास्पद भ्राताकी आज्ञा को न माना और तुम को आपत्ति में फंसाया और अपना मन उन की दृष्टि से दूर कर लिया।" इतना कह कर मूर्छित सा हो गया ॥

रामचन्द्रजी-"लक्ष्मण ! अब विषाद व शोक करने से तो कुछ लाभ नहीं होगा, देखो यह समय चिन्तातुर होने का नहीं है, वरञ्च धैर्य्य और संतोष का समय है क्योंकि जो कार्य्य मन की दृढता से होते हैं वह चिल्लाने व रुदन करने से कदापि नहीं होते, स्मरण रहे कि जो मनुष्य आपत्ति का सामना धैर्य्य धार कर करता है, वही कृतकार्य्य होता है, निस्सन्देह भाग्य बली है परन्तु उद्यम भी तो कुछ चीज़ है, हां ! इस के सोचने के लिये

मनुष्य की बुद्धि की आवश्यकता है और वह तब ही प्राप्त होती है जब मास्तिष्क चिन्ता विहीन हो, तुम्हारी यह बाल क्रीड़ा मेरे धैर्य और उद्यम में विघ्नकारी होगी इस में किंचित सन्देह नहीं कि वह प्राण प्यारी हम से बिछुड़ कर उस दुष्ट के पंजे में फंस गई परन्तु क्या यह आवश्यक है कि हम भी निराशता के विचारों को अपने मन में ठान कर आलसी बन जावें ? नहीं २ ऐसा न करो संतोष और धैर्य के साथ उसके छुड़ाने का यत्न करो" ॥

लक्ष्मण–(निराश से होकर) "जो कुछ आपने कहा सब सत्य है परन्तु मैं क्या करूं ? यह मेरे आधीन नहीं है मेरे हवास उड़े हुए हैं और कुछ समझ में नहीं आता ॥

इतने में दाईं ओर से एक मनुष्य (हनुमान) प्रकट हुआ, और सीस निवा नम्रभाव से हाथ जोड़ कर आ खड़ा हुआ, रामचन्द्र जी ने पहिले तो उस को सिर से पांव तक अपनी दृष्टि से जांचा और फिर कहने लगे ॥

रामचन्दर–"भाई तुम कौन हो और हम से क्या चाहते हो ।

हनुमान–(हाथ जोड़ कर) "महाराज ! मैं एक विदेशी यात्री हूं आप के दिव्य रूप को देख कर विदित होता है कि निस्सन्देह आप किसी राज वंश से हैं, परन्तु असहाय सामग्री हीन देख कर बुद्धि चकित होती है, इस का क्या कारण है कृपा करके अपने हाल से सूचित कीजिये और मेरे सन्देह निवृत कीजिये ॥

राम चन्द्र जी—हम दोनों अयोध्या नरेश राजा दशरथ के पुत्र हैं (इशारा करके) इस का नाम लक्ष्मण और मेरा नाम रामचन्द्र है पिता जी की आज्ञा से १४ वर्ष के लिये बनवास स्वीकार किया है, लक्ष्मण जी की ओर निहार कर) इस परम प्रिय भ्राता ने भी साथ दिया और धर्म पत्नी जी भी वियोग को असह्य जान कर संग आई १३ वर्ष तो आनन्द पूर्वक व्यतीत हो गये परन्तु अब १४वें वर्ष इस प्रान्त में यह आपत्ति आन पड़ी है कि वह पतिव्रता धर्म पत्नी लुप्त होगई है। बहुत से यत्न व तलाश से जटायू नामी एक पुरुष से मालुम हुआ है कि लंकाधीश रावण उस को विमान में बैठाकर लेगया है"।

हनुमान जी ने यह बातें सुन कर श्रीरामचन्द्र जी के चरणों में सीस नवाया परन्तु उन्हों ने झट उठा कर उस को छाती से लगा लिया और कहने लगे॥

"आप पहिले बतायें कि आप कौन हैं" ?

हनुमान—"महाराज! पम्पाझील और इस के इतस्ततः के पहाड़ी देशों का मालक किष्किन्धा नरेश महाराज बाली है और उन का छोटा भाई सुग्रीव मेरा श्वसुर है, इस के संग बाली का ऐसा वैर भाव है कि उस ने उस का घर घाट छीन कर घर से निकाल दिया है और वह दीन प्राण बचा कर उस कुटीर में छिपा पड़ा है क्योंकि वह युद्ध करने की सामर्थ्य नहीं रखता। जो आप न

रावण के विषय में सुना है वह वास्तव में सत्य है सुग्रीव ने भी उस को अपने नेत्रों से देखा है और उस पतिव्रता स्त्री का एक दुपट्टा और कुछ भूषण भी यहां पड़े हैं, जिन को उस ने चलते हुए विमान से न जाने क्या जान कर स्वयं गिरा दिया था, 'यदि आप सुग्रीव की इस आपत्ति काल में सहायता करेंगे तो पूर्ण विश्वास है कि वह राज्य पा कर आप के इस कार्य्य में अवश्य सहायता करेगा' ॥

हनुमान जी के वचन सुन कर महाराज रामचन्द्र बड़े प्रसन्न हुए और * लक्ष्मण जी की ओर निहार कर उस की श्लाघा करने के अनंतर बोले ॥

"आनन्द ! इस बात का तो कुछ विचार नहीं, चाहे वह हमारी सहायता करे या न करे परन्तु वास्तव में यदि उस के साथ अन्याय किया गया है और बाली इस हत्याचार का कर्ता है जैसाकि तुम वर्णन करते हो तो हम क्षत्रिय हैं हमारा यह धर्म है कि आपत्ति प्राप्त निर्बलों की सहायता करें । यह कह कर आगे बढ़े ॥

जब सुग्रीव ने हनुमान जी को प्रसन्नता पूर्वक आते देखा तो शीघ्रता से स्वागत के लिये आगे बढ़ा और

*इस समय रामचन्द्र जी ने जो श्लाघा हनुमान जी की, यह विचारणीय है वह कहते हैं, हे लक्ष्मण जी ! जो लक्षण शास्त्र कारों ने पण्डितों और ब्राह्मणों के वर्णन किए हैं वह सब हनुमान में प्रतीत होते हैं, इन की बात चीत से प्रतीत होता है कि यजु ऋक और सामवेद के ज्ञाता हैं, और व्याकरण भी भली भांति जानते हैं (देखो बाल्मीकी रामायण किष्किन्धा काण्ड सर्ग ३)

हनुमानजी से उनका हाल सुनकर अति प्रसन्न हुआ, श्री रामचंद्र जी से आलिंगन कर फिर लक्ष्मण जी से मिला और वार्तालाप करता हुआ इनको निज भवन में ले आया और दुपट्टा और भूषण दिखाकर शोक जनक वचन कहने लगा फिर श्री रामचन्द्र जी को अपनी व्यवस्था सुनाई ॥

जब नवीन प्रेम की वार्तालाप समाप्त हुई तो हनुमान जी ने देश रीति अनुसार अग्नि प्रदीप्त की जिसकी प्रदक्षिणा कर रामचन्द्रजी और सुग्रीव ने मैत्री भाव का प्रण किया दूसरे दिन रामचंद्र जी ने वाली युद्ध करने के लिये सुग्रीव को उद्यत किया और आप भी सहायता के लिये तय्यार हो गये ॥

२६वां अध्याय

बुराई का परिणाम ॥

जो दुःख देवे पर को जग में सो सुख पावे कैसे ?
सुखरामदास यह अटल नियम है, पावे वह दुःख वैसे ।

प्रातःकाल का सुहवाना समय है तारागण गगन मंडल में चमकते हुये दिखलाई दे रहे हैं, अमृत वेला की शीतलमन्द सुगन्ध पवन सोने वालों पर योग निद्रा का बल दिखला रही है, जिस से जाग्रत होना तो दूर वह करवट लेना ही नहीं चाहते, परन्तु उन महात्मा जनों की आत्मा जिनको ईश्वर दर्शनकी लालसा है, वह तो कुछभी परवाह न कर गद गद ध्वनि से कह रहे हैं कि "यह दुर्लभ समय

है फिर हाथ न आवेगा इस को व्यर्थ न खोवो" इस प्रेरणा को पाते ही महात्माजन तत्काल उठ कर आवश्य कीय शारीरिक धर्म्म से निपट स्नान के अनन्तर नित्य कर्म्म सन्ध्या वंदनादि में लग जाते हैं, वैसे ही किष्किन्धा धीश राजा बाली भी अपने नियमानुसार उठा और शरीरिक क्रियाओं से निपट स्नान के निरन्तर सन्ध्योपासना में बैठ गया और नित्यकर्म्म करने के अनन्तर एक आवश्यक कार्य्य के लिये रानी तारावती के राज महल में गया अभी उस से कुछ कहना ही चाहता था कि एक दासी ने आन कर कहा ॥

"महाराज ! न जाने आज सुग्रीव के मन में क्या विचार आया है कि ऐसे अयोग्य वचन आप के विषय में द्वार पर खड़ा कह रहा है जिन को मुख से निकालते हुये मुझे लज्जा आती है ऐसा जान पड़ता है कि वह अपने जीवन से निराश हो गया है"।

दासी के यह वचन जिनको मृत्यु संदेश कहें तो अत्युक्ति नहीं सुनते ही बाली का मुख क्रोध से लाल होगया शिर से पांव तक कांपने लगा, रुधिर नाड़ी २ में वेग दिखाने लगा और वह शत्रु को दण्ड देने के लिये घर से बाहर निकला, यद्यपि तारावती द्वार तक उस के पीछे २ कहती चली आई कि स्वामी जी "सुग्रीव को कोई महान् सहायता प्राप्त होगई है, अन्यथा उस को यह साहस कभी न होता कि आप को इस भान्त ललकारता आप को इस समय जाना उचित नहीं" परन्तु वह किसी बात की पर-

धाह न करता हुआ सुग्रीव पर जा लपका, जो उस को देखते ही वहां से भागा और फिर दोनों दृष्टि से लोप होगये।

रानी तारावती चकित सी हो कर दासियों सहित निज भवन में आकर बैठ गई और यद्यपि उस की सहवासिनी सहेलियें इधर उधर की वार्तालाप कर और कई प्रकार की वातों से उस की सांत्वना करना चाहती हैं परन्तु उसका मन किसी की बात को नहीं सुनता और उसी दासी की वात को स्मरण कर चिन्ता सागर में डूब रही है, अभी थोड़ा काल ही व्यतीत हुआ था कि कुछ कोलाहल रानीको सुनाई दिया वह शीघ्रता से उठ कर पूछना ही चाहती थी कि झट किसी ने कह दिया कि "हा ! ऐसा बलवान राजा वाली क्षण में मारा गया" यह सुनते ही रानी के नेत्रों के आगे सरसों फूल गई सिर चक्कर खा गया, वह सिर को थाम कर नीचे बैठ गई, रुधिर जहां घूम रहा था वहीं जम गया, जब कुछ चैतन्यता आई तो मृत स्वामी के देखने के लिये दौड़ी गई और बेसुध होकर पृथिवी पर गिर पड़ी, परन्तु दर्शनाभिलाषा ने सब को पराजय कर अपना ही वेग दिखलाया, अब रानी शीघ्रता से कुछ सहेलियों के संग जिन के नेत्रों से अश्रु धारा मेघ के समान छम छम बरस रही थी उसी ओर को जा रही है जिधर बहुत से, जन समुदाय एकत्रित थे हा ! क्या वाली मरा ? नहीं ! नहीं !! अभी तो वह जीता

है परन्तु रामचन्द्र जी के एक ही बान ने उस को बेसुध कर दिया है और किसी क्षण का मेहमान है ॥

जब तारा वाली के निकट पहुंची तो उसकी दशा को और अपनी आगामी आशाओं का विनाश देख मूर्छा गत हो गई अब निराशता का रूप धारी वाली ने खेदयुक्त दृष्टि से तारा और अंगद की ओर देख और फिर मूर्छित हो गया, थोड़े काल के अनन्तर जब सुध आई तो सुग्रीव की ओर देख कर कहने लगा ॥

वाली—"सुग्रीव यद्यपि तू ही मेरी मृत्यु का कारण है और मेरा हृदय तेरे इस कर्म्म से चकनाचूर हो रहा है तथापि यह मेरी अन्तिम शिक्षा है जिस को पूर्ण करने के लिये तुझ से आशा रखता हुं और वह यह है कि मेरे पीछे तारा और अंगद के रक्षक बने रहना और उनको किसी प्रकार से दुःखी न होने देना मुझे पूर्ण विश्वास है अंगद भी तेरी आज्ञा भंग न करेगा, यह कह ही रहा था कि मृत्यु ने वाली के जीवन दीपक को ठंडा कर दिया और वह सदैव के लिये गाढ़ निद्रा में सो गया ॥

जब तारा को किञ्चित् सुध आई तो स्वामी के प्रेम के वेग से लज्जा की ओर तनिक ध्यान न दे पति की लाश से झट चिमट गई, और बड़े ज़ोर से चिल्ला कर कहने लगी । "प्राण पति तुम्हारी यह गति कैसे हुई" परन्तु जब कुछ उत्तर न मिला तो उसे निश्चय हो गया

कि मेरे प्राण पति के प्राण पखेरू शरीर रूपी पिंजर से उड़ गये हैं यह देखते ही तारावती सिर पीट पीट कर दुहाई देने लगी, पति प्रेम ने उस के हृदय के भीतर अग्नि जला दी और निराशा अपना प्रबल वेग दिखाने लगी अनुराग उमंडने लगा, लज्जा दूर भाग गई दुपट्टा शिर से उतर कर कंधों पर आ पड़ा, नग्न सिर हो मृतक पति से लिपटगई।

तारा की यह दशा और बाली को मृत्यु शय्या पर लेटे देख सुग्रीव के मन की बाग पलट गई और भ्रातृ प्रेम ने अपना जोश अंकुरित कर दिया और यकायक उस का दिल भी धड़कने लगा, हृदय फटने लगा, निराशता निर्दयता को कम्पायमान करने लगी तब उस वास्तविक समाचार विदित हुआ और कहने लगा कि हाय क्या था और क्या होगया। परन्तु इस समस्त आपत्ति का मुख्य कारण आप ही था अतः इन सब विचारों को अपने मन ही मन में दमन कर गया, अश्रुपात बहिर्मुख हो उस को धैर्य दिखाने के स्थान अन्तर्मुखी हो चिन्ता अग्नि पर पड कर हृदय क्लेश को रेल की स्टीम की भान्ति निकाल मस्तिष्क की ओर चढ़ने लगे और इस के सिर को ऐसा चकरा दिया कि बेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा और बेवश होकर चिल्ला उठा "हाय बाली तू मुझ से सदैव के लिये बिछुड गया" कुछ काल तो एम ही कोलाहल मचाता रहा फिर जब अंगद पर दृष्टि पड़ी तो उस को

गले से लगा लिया और फूट २ कर रोने लगा, इन को पश्चात् चिन्तातुर तथा दुःखित देख रामचन्द्र जी आगे बढ़े और सब के दुःखित तथा व्याकुल हृदयों को अपने अमृत मय वचनों से ठंडा कर वाली की अन्त्येष्टि क्रिया के लिये सब को उद्यत किया ॥

चौपाई ।

बिन जगदीश सकल जगमाहीं, स्थिर रहा कोई नर नाहीं
राजा रंक और नर नारी, काल ग्रास किये सब भारी ।
धन संपद का करो न माना, स्थिर रहा न कोई निदाना ।
किये नाश जग में बड़ भागी, जपी तपी और रागी वागी ।

जब इस कार्य्य से अवकाश पाया तो दूसरे दिन लक्ष्मण जी ने सुग्रीव को राज्य सिंहासन पर बैठा अंगद को युवराज नियत किया राज्याधिकारियों ने मर्यादानुसार राज्य भेटा दी घर २ हर्ष वाद्य बजने लगे और लक्ष्मण जी के इस श्लाघनीय कार्य्य की सब बड़ाई करने लगे और धन्यवाद देने लगे ॥

दूसरे दिन सुग्रीव राज्याधिकारियों को संग लेकर श्री रामचन्द्र जी के चरणों में उपस्थित हो कहने लगा ॥

सुग्रीव—"आप के इस अनुग्रह का मैं अतीव अनुग्रहीत हूं परन्तु क्या करूं कि इस ऋण मोचन की सामर्थ्य मुझ में नहीं" यह कह कर रामचंद्र जी के चरणों में गिर पड़ा परन्तु उन्हों ने तत्काल उसे उठा कर अपने गले से लगा लिया

रामचंद्र—"तुम किस विचार में हो, यह कोई तुम पर अनुगृह नहीं परस्पर आपत्ति काल में सहायक होना मानुषी धर्म है निर्बल को बलिष्ट के अत्याचार से बचाना क्षत्रिय धर्म है, फिर बतलाओ कि अनुगृह किस बात की हुई"॥

सुग्रीव—(कुछ काल चुपके रह कर) "अच्छा जो कुछ आपने कहा सत्य और ठीक है परंतु मैं कदापि सह नहीं सकता कि सीता महारानी दुःख और चिंता में पड़ी हो और हम उन को क्लेश से निकालने का यत्न न करें, यदि आज्ञा हो तो उस अदूरदर्शी रावण पर सेना लेकर चढ़ाई करें, क्योंकि उस से सतोगुण से कार्य निकलना कठिन है॥

रामचंद्र—इषत हंस कर "ऐसी शीघ्रता! वर्षा ऋतु में शास्त्रकारों और सामयक वैद्यों ने यात्रा की आज्ञा नहीं दी इस लिये अभी हम को मौन धारण करना चाहिये, हां इस अवसर में तुम सेना और रसद आदि का प्रबन्ध कर लो"॥

सुग्रीव—"सत्यवचन! यह कह कर ग्राम की ओर चला। आया हनुमान, अंगद, नल, नील को बुला कर युद्ध सामग्री एकत्र करने को नियुक्त किया"(और आप भी इस कार्य्य में प्रवृत होगया॥

———

३७वां, अध्याय

हनुमान जी की वक्तृता और रावण के नाश की युक्ति।

दिन के तीसरे पहर का समय है जब कि महा शैल पर्वत जोकि कृष्णा नदी के दक्षिण और तुंगभद्रा के उत्तर

में विराजमान है एक विचित्र दृश्य दिखाई दे रहा है, इस के शिखर पर खड़े हो कर देखने से चारों ओर बन ही बन दिखाई देते हैं, परन्तु तनिक दृढ़ चित्त होकर देखें तो असंख्य बस्तियें भी दिखाई देती हैं, जो इन जंगली वृक्षों की ओट में छिपी हुई हैं, और यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देतीं परन्तु अनुमान से जान पड़ता है कि दक्षिण की बस्तियों से अवश्यमेव इधर को कोई मार्ग आता है, क्योंकि दूर तक वृक्ष परस्पर मिलाप को छेदन करते हुए चले गये हैं, या यह समझें कि एक गली सी भासती है, निःसंदेह हमारा अनुमान ठीक है, वह देखिये ! बहुत से मनुष्य वार्तालाप करते हुए उधर से आ रहे हैं, और अब यहां पर पहुंच कर दरी आदि बिछा रहे हैं, थोड़ी देर में मनुष्यों का इतना जमघटा होगया कि फरश भी रुक कर भूमि पर बैठने की प्रेरणा कर रहा है और मनुष्य अभी अपने आगमन वेग के प्रवाह को बन्द नहीं करते, जितने मनुष्य यहां पर सुशोभित हैं सब के सब प्रसन्न वदन हैं और सब इस प्रतीक्षा में हैं कि देखें यह युवक कौन सी ऐसी बात सुनाता है कि जिस के लिये बाल वृद्ध सभी निमंत्रित किये गये हैं ॥

इतने में कुछ मनुष्य घोड़ों को दौड़ाते हुए आ पधारे, जैसे ही उन्हों ने भूमि पर पाओं रक्खा दासों ने जो पूर्व ही इन की प्रतीक्षा कर रहे थे अपने २ घोड़ों की

वागें पकड़ कर इधर उधर घुमाना आरम्भ कर दिया और सवार बड़े आनन्द और उत्साह से सजे सजाए स्थानों पर बैठ गये, इनके बहु मूल्य पहरावे और मुख के प्रकाश से विदित होता है कि यही महाशय इस उत्सव के प्रधान और कर्ता धर्ता हैं, यद्यपि इन के प्रताप ने उपस्थित मंडली के मुखों को ऐसा बन्द कर दिया है कि यदि उनको उस समय के लिये मूक कहें तो अत्युक्ति नहीं। परन्तु इन सब की दृष्टि उस वीर पर जो सब के मध्य में सुशोभित और जिस के शरीर में भगवान ने वीरता के समस्त लक्षण पूर्ण रूप से उत्पन्न कर दिये हैं अतीव अधीरता से पड रही है और इसी कारण इन लोगों की प्रबल वेग अधीरता इनको चंचल बना रही है, और परस्पर कानों में कह रहे हैं कि इस वीर (अंगुली से दिखला कर) ने न जाने कौनसा मन्त्र चलाया है कि कोई भी ऐसा मनुष्य विचार में नहीं आता जो यहां उपस्थित न हो" ॥

दूसरा—"भाई! कैसे न आये! आज चार पांच दिन से निरन्तर बड़े २ विद्वानों और धनाढ्यों के स्थानों पर सभा होती रही है। विचारों का प्रवाह चलता रहा है नारायण जाने इन विचारों का वास्तविक अभिप्राय क्या है? हमें तो इस के अतिरिक्त और कुछ भी विदित नहीं कि यह युवक पवन का पुत्र और सुग्रीव का जमाता है" ॥

इतने में वही युवक जिसका नाम हनुमान है एक

पुरुष की प्रार्थना से खड़ा हुआ, सब एक दृष्टि हो टिक टकी बांधे उधर ही देखने लगे और उस ने इस प्रकार कहना आरम्भ किया ॥

हे माशिला ऋष्यमूक और मेरू पर्वत के निवासी युवक वृन्द शूरवीर सरदारो! सब से पहिले मैं यह कह देना आवश्यक समझता हूं कि मैंने किसी निज कार्य के लिये आप लोगों को इतने दूर की यात्रा का कष्ट नहीं दिया, मेरी स्वार्थता तनिक नहीं वरंच अपने देश की दुरावस्था तथा आगामी बुराइयों के भय से मेरा रुधिर जोश खा रहा है और इस के अतिरिक्त और कोई उपाय प्रतीत नहीं हुआ। प्यारे भ्राताओ! सब से पहले जिन विचारों ने मेरे अन्तः करण को दुखित किया है वह पुरानी इतिहासों के पाठ का सारांश है, जिन के सुनने से हृदय छेदित हो जाता है, नेत्र लज्जातुर हो पांवों की ओर देखने लग जाते हैं, हा दैव! देश के लिये वह कैसा दुर्घट समय था कि जिस समय अविद्या रूपी कृष्ण मेघों की घटायें चारों ओर से इस देश को घेरे हुई थीं और घर घर पशुत्व विस्तृत हो रहा था, अन्य देशीय घृणा से हमारी ओर देख रहे थे। परस्पर वार्त्तालाप तो क्या हमारे मुख तक भी नहीं देखने चाहते थे, मित्रो! यदि उस इतिहास के हर अक्षर को ईश्वरीय कृतता कहें तो ठीक है क्योंकि इस का एक

एक अक्षर पढ़ने वाले के मन को दग्ध कर देता है, अभद्र सहिष्णुता निज बल से सीश नवा देता है मेरे स्वदेशी मित्रो ! इस में (किञ्चित असत्य नहीं उंगली के इशारे से) यह इतिहास पड़ा है देख लीजिये हां यदि कुछ साहस आता है और धीर्यबलवान होता है तो एक मात्र उन युवकों के ऐतहासिक वृत्तान्त पढ़ने से जो इस पुस्तक के अंत में लिखे हैं जिन के पाठ से उस अविद्या के समय का पूर्ण विनाश प्रतीत होता है, इस में किंचित संदेह नहीं कि उन को बड़ी बड़ी रुकावटें झेलनी पड़ीं और कठिनतायें सहनी पड़ीं परंतु उन वीरों ने भी बड़ी शूरवीरता से इन का सामना किया और धैर्य से काम लिया, महाशयगण ! यह उन ही के परिश्रम का फल है कि जो आप लोगों ने आज विद्याधर के पद पाये और विद्याधर कहलाने के अधिकारी हुये और प्रतिष्ठा प्राप्त की, वही विदेशीय जन आज तुम को वीरता और साहस में अद्वितीय गिनते हैं और तुम्हारे निकट अपना सहवास प्रातिष्ठास्पद विचारते हैं, परंतु हा खेद ! यह समय भी परिवर्तन होने वाला है, वह भाग्योदय द्योतक तारा जो कुछ २ चमक दिखलाने लगा था आप लोगों के आलस से फिर टमटमाने लग पड़ा है फूट और स्वार्थता अन्य देशियों का साहस बढ़ा रही है, स्वतंत्रता क्षण के लिये विद्यमान प्रतीत होती है। परतंत्रता उग्र दृष्टि से देख

रही है, हा खेद ! आप लोग इस बात पर विचार ही नहीं करते अन्य देशीय चाहे हम पर कितना अत्याचार क्यों न करें, हमारी प्रतिष्ठा चाहे मिट्टी ही में क्यों न मिलादें आप लोगों के कान पर जूं तक भी नहीं रेंगती और रेंगे भी क्यों आप को तो कोई आपत्ति नहीं यदि पड़ी है तो उन दीनों पर जो आप के आश्रय हैं। स्मरण रहे कि यह विचार आप को भुला रहा है आप के मानुषीय कर्तव्य सामान्य नहीं हैं। ईश्वर के समीप आप ही इन बातों के दोषी ठहराये जायेंगे और उत्तर दाता होंगे। संसार आप ही को दुर्नाम से स्मरण करेगा और इन दीनों की आहें आप के आगामी प्रताप को विनाश कर देंगी तनिक शास्त्रों को देखो राज्य नीति को पढ़ो और विचारो कि हमारे क्या कर्तव्य हैं, जब जनक राज दुलारी को अन्यदेश का राजा बल से पकड़ कर लेगया किसी ने तनिक भी साहस न किया नरेन्द्र विद्याधर की स्त्री को राक्षस द्वीप वाले लेगये तो किसी ने न पूछा, निचले पद की अवतव्यताओं की तो कोई गिनती ही नहीं, न जाने फिर आप लोग किस बात पर अहंकार करते हैं। शूरवीरो ! जब तक तुम एक दूसरे पर अपने प्राण देने को उद्यत नहीं होजाते तब लग तुम्हारे देश की उन्नति की संभावना कठिन है, याद रखो कि यदि यही दशा रही तो तुम्हारे शत्रु तुम सब को एक एक करके खा जायेंगे और तुम

देखते ही रह जाओगे और तुम्हारी यह सामर्थ्य, वीरता, साहस और दलेरी मिट्टी में मिल जावेगी, इस का परिणाम यह होगा कि तुम अन्य वंशीओं के आगे सीस नवाते फिरोगे और कुछ न बन पड़ेगा क्या जाने कई भ्राता इस विचार में हों कि राक्षस द्वीप वाले बली और वीर हैं उन पर जय पानी असंभव है परन्तु नहीं उन का विचार व्यर्थ है, तुम निर्वल नहीं हो वरंच वह निर्वल हैं जो हर अवसर पर हमारी सहायता के आकांक्षी रहते हैं, जैसाकि आप लोगों को विदित है, इस में संदेह नहीं कि उन में एक शक्ति काम कर रही है, जिस ने तुम्हारी धैर्य को निर्वल कर रखा है और वह एकयता जो सदैव तुम्हारी फूट पर प्रबल रहती है, हाय! जब उन वनवासियों की आपत्ति का चित्र मेरी आंखों के आगे आजाता है तो मेरा शरीर रोमांच होजाता है, आह वह किस! विचार से इतने दूर देश की यात्रा करके तुम्हारे देश के देखने को पधारे और उन पर यह अत्याचार! धिक्कार है हमारी वीरता और जीवन पर! हे मित्रो! तनिक ध्यान तो दो कि उन के देश के लोग हमें क्या कहेंगे, किस नाम से स्मरण करेंगे, अपनी बहु बेटियों की तो तुम ने कुछ परवाह न की, परन्तु वह एक विदेशीय महाराजा का पुत्र जो दैवयोग से तुम्हारे देश में आगया वह कैसा दुखित होरहा है हा! उस के साथ राक्षस द्वीप वाले

अत्याचारी ऐसा जुलम कर जायें और तुम डरपोकों के समान अब तक मौन धारे रहो ॥

पाठकगण ! वीर की वक्तता का एक २ अक्षर शूरवीरों के हृदय में तीर की भान्ति छेद कर गया और वह अधिक श्रवण की शक्ति न रख कर बोल उठे:—

उपस्थित सभ्य--बस ! हम में अधिक सहन की सामर्थ्य नहीं अब आप उन बनवासियों के हाल से सूचित करें कि उन पर क्या अत्याचार हुआ और वह कौन हैं ?

हनूमान—(कम्पायमान होकर) तुम लोगों के हृदय मुरदा होगये हैं, दिल कायरता से मुरझा गये हैं आप उन का वृत्तान्त सुन कर क्या करेंगे । तनिक आप ही विचारो कि जब तुम्हारे मन में अपने देश की ही ममता नहीं तो एक विदेशी की कब होगी उस बनवासी की कथा सुन कर क्या करोगे जिस के वर्णन करने के लिये भी तो साहस की अवश्यकता है, उस के पुनर्कथन से मेरा हृदय टुकड़े २ होकर सिर घूम जाता है, परन्तु जब उस वीर बनवासी के धैर्य और साहस का विचार आता है कि जिस ने ऐसी आपत्ति में डूबे हुये होने पर भी सुग्रीव की दुखित अवस्था को देख कर दया धर्म्म का पालन किया है और बड़े साहस और वीरता से उस बाली को जो कि अपने आप को बल में अद्वितीय समझता था एक क्षण में परलोक पहुंचा दिया, इस से प्रत्यक्ष विदित होता है, कि वह वीर

वीर हमारी सहायता की भी कुछ आकांक्षा नहीं रखता वरंच स्वयं प्रबंध कर सकता है परन्तु जो विचार मेरे हृदय को विदीर्ण कर रहा है वह यह है कि कायर और डरपोकों में हम पहिले गिने जावेंगे उत्तरीय भारत वर्ष निवासी हम को बुरे नाम से स्मरण करेंगे, इतिहास हमारी कठोरता व निर्दयता की साक्षी देंगे, लज्जा और अकृतज्ञता जीवन पर्य्यन्त हमारा पीछा न छोड़ेगी। भ्राताओ! तुम ही विचारो कि सहायता करनी आवश्यक है या नहीं?

(चारों ओर से) नहीं २ उस अत्याचारी को अवश्यमेव दंड देंगे, उस वनवासी की सहायता के लिये अपने प्राणों तक न्यौछावर कर देंगे परन्तु अपने देश की अप्रतिष्ठा नहीं सह सकेंगे, तनिक उस की हालत को तो आप वर्णन करें॥

हनुमान–"अच्छा देखें तुम्हारी सहायता किस सीमा तक है" महाशयो! श्री रामचन्द्र जी का वृत्तान्त जिस को मैंने वनवासी शब्द से पुकारा है अतीव विस्मय जनक और खेदास्पद है, यह महाराज अयुध्या कौशला ऽधिपति दशरथ महाराजा के चिरञ्जीव पुत्र हैं, यह वही रामचंद्र हैं जिन्हों ने १६ वर्ष की आयु में ताड़का राक्षसी और सुबाहु आदि राक्षसों का नाम संसार से उठा दिया था और कई एक बड़े २ वीरों के होते हुये मिथुलेश राजा जनक की राज दुलारी को वह धनुष जिस को देख कर बड़े २ शूरवीर धनुषधारी भी घबरा गये थे एक पल

में तोड़ कर व्याह लाया था, जब इन के पिता महाशय ने इन को सकल गुण सम्पन्न देखा तो युवराज इन को बनाना चाहा परंतु शोक ! कि इन की सौतेली माता यह बात सह न सकी उस ने अपने पुत्र भरत को राज्य और इन को १४ वर्ष वनवास के भेजने के लिये स्वामी से प्रार्थना की क्योंकि एक महान् आपत्ति काल में केकई ने महाराजा दशरथ को पूर्ण सहायता दी थी और राजा उस को दो वार देने का प्रण कर चुका था इस लिये उस ने अपने वचन पालन करने के लिये जोकि क्षत्रियों का परम धर्म है, संकुचित होगया, परन्तु ऐसे आज्ञाकारी सुयोग्य पुत्र को (जिस को कि अपने मुख से राज्य देने की आज्ञा दे चुका था) अब १४ वर्ष वनवास की आज्ञा देनी कठिन होगई थी वह चिन्ता सागर में डूब गया, श्री रामचन्द्र जी को ज्यों ही इस समाचार की सूचना मिली तत्काल पिता जी को सान्त्वना और निज माता को धैर्य दे वनवास के लिये उद्यत होगये, छोटे भाई लक्ष्मण जी ने इन का वियोग न सह कर संग किया, मिथलेश कुमारी जानकी जी को यद्यपि रामचन्द्र जी ने बहुत समझाया और भान्ति २ के वनवास के क्लेशों के चित्र खेंच कर भयभीत किया परन्तु उस ने यही उत्तर दिया कि स्वामिन् यद्यपि माता, पिता, बहिन, भ्राता, कुटम्ब, सहेलियां, सास और सुसर आदि अतीव प्रिय और हितैषी हैं परन्तु आप के बिना

मेरे लिये यह सब कलेश के कारण होंगे। धन भूषण सेवक, सेवकायें, अतलस और मखमल के लिहाफ और राज्य महल आदि आप के बिना चितावत क्लेश दाता हो जावेंगे, जैसे शरीर प्राणों के बिना और मछली जल से बिना सजीव नहीं रह सकती इसी प्रकार मेरा जीवन आप के बिना कठिन हो जावेगा आप के संग बनवास मेरे लिये अतीव सुखदायक होगा बन के घास की बिछाई मेरे लिये घर के कोमल मद्योच बिछाइयों से अधिक कोमल और सुख दाई प्रतीत होगी, आप के संग बन के फल फूल गृह के सुस्वादु भोजनों से अधिक स्वादिष्ट होंग। हे स्वामिन्! मैं आप के बिना यहां किसी प्रकार नहीं रह सकती और न ही स्त्री धर्म मुझ को यहां रहने की आज्ञा देता है। जब रामचन्द्र जी ने उसको अपने विचार में दृढ़ समझा तो अपने साथ उस को बन में ले आये १३ वर्ष उस पतिव्रता धर्म पालका देवी ने अतीव प्रसन्नता पूर्वक पति की सेवा में दिन व्यतीत किये और रामचन्द्र जी ने उस अवसर में कई एक पापिष्ट जीवों का बध कर भूमि का भार उतारा अन्त में इस देश के देखने की लालसा से पंचवटी में सुशोभित हुए, जहां स्वरूपनखा रावण की भग्नी उन के लघु भ्राता लक्ष्मण जी पर मोहित हो प्रेम को प्रकट करने लगी लक्ष्मण जी ने उसको इस पाप कर्म की निवृति के लिये बहुत यत्न किया और अन्त में उस

के अधिक हठ करने पर उस का नाक काट कर उसे इस पाप कर्म्म का दण्ड दिया तब वह रोती पीटती और चिल्लाती हुई अपने भाई खरदुषण के पास गई और उस को बदला लेने के लिये उद्यत किया खरदूषण बाहिन की यह दशा देख क्रोधाग्नि में दग्ध होगये और १४००० राक्षस सेना सहित राम चन्द्र जी से युद्ध करने के लिये आये आश्चर्य्य का विषय है कि एक ओर तो १४००० राक्षसी सेना और दूसरी ओर केवल दो भ्राता ! परन्तु इन दोनों वीर भ्राताओं ने उन के ऐसे दांत खट्टे किये कि राक्षसी सेना इन का कुछ भी न बिगाड़ सकी वरंच उन को इन के तीक्ष्ण बानों की बली होना पड़ा, इतनी बडी सेना थोड़े से काल में विनष्ट होगई, रावण इस का बड़ा भ्राता इन से युद्ध की सामर्थ्य न समझ कर तस्करों की भांति छल से जानकी जी को अकेली देख विमान पर बैठा कर लंकापुरी में लेगया, जिसे सुग्रीव ने जो कि उस समय अपने स्त्री क्लेश से क्लेशित था, अपने नेत्रों से देखा। जब रामचन्द्र जी और लक्ष्मण जी जानकी जी को ढूंढते हुए किष्कंधा पहुंचे तो सुग्रीव को चिन्तातुर देख कर उन को दया आई और बाली को एक ही बान से परलोक गमन करा सुग्रीव को राज्यारूढ़ किया । प्रिय स्वदेशीय भ्राताओं ! क्या उस पतिव्रता स्त्री की ओर जिस ने संसार के सुखों को त्याग कर स्त्री धर्म्म पालन करने के हित अपने

पति के संग भयानक वन में रहना स्वीकार किया था ऐसे अपवित्र शरीर को संसार से बीज नष्ट करने के लिये कृतकार्य न होंगी ? क्या उस की मानसिक अभिलाषा जिन को वह अपने हृदय में धारण कर वस्ती से वन को उत्तम समझती थी रावण की भविष्यत लालसाओं को विनष्ट कर देंगी ? मित्रो ! देखोगे कि रावण किस प्रकार नाश को प्राप्त होता है यह मत समझें कि रामचंद्र जी अकेले हैं और वह शूरवीर युद्ध सामग्री से रहित हैं और इन का रावण को पराजय करना कठिन है नहीं २ वह अकेले नहीं धर्म्म उन की रक्षा कर रहा है परमात्मा उन का सहायक है युद्ध सामग्री की कुछ चिन्ता नहीं रावण को परास्त करने के लिये उसका (रावणका) अपना पाप ही बहुत है । मित्रो ! तुम्हारा साहस क्यों घट गया और किस सोच में पड़ गये हो ? कुछ चिंता नहीं । यदि तुम रावण से युद्ध करने का साहस नहीं रखते तो वह स्वयम खरदुषण के समान उस को परास्त करने के लिये बहुतहैं।

इन अन्तिम वचनों ने उपस्थित सभ्यों के हृदय पर कुछ ऐसा प्रभाव डाल दिया कि वह क्रोध वश हो कांपने लगे और ऊंचे शब्द से बोले " नहीं ! नहीं ! जब लगे हम जानकी जी को रावण के पंजे से नहीं छुड़ा लेते हमारे लिये विश्राम करना शपथ है ॥

पाठकगण ! इसी प्रकार अंगद और * नील आदि वानर द्वीप के हर एक प्रांत में प्रचार कर रहे थे ॥

३८वां अध्याय

जाईये–ईश्वर आप की सहायता करे ॥

किष्कन्धा नगर का वह मैदान जो पम्पा झील के पूर्व दक्षिण में है आज विचित्र लीला धारण कर रहा है, जहां तक दृष्टि जासकती है, मनुष्य ही मनुष्य दीख पड़ते हैं और सैंकड़ों तंबू तने हैं, घोड़ों की ध्वनी से

---

* किष्कधाकांड ३६ सर्ग को देखोः—

पाठकगण ! हनुमान जी की वकृता सुन कर क्या जाने आप लोगों के हृदय में यह विचार समा गया हो कि हमने एक नवीन। ही समाचार अपनी ओर से कपोलकल्पित लिख दिया है, मित्रो। हमने कोई नवीन वृतान्त कल्पित नहीं किया, न हीं हम, ऐसी मान नीय पुस्तक में छिद्रान्वेषण रुप से हस्तक्षेप करना चाहते हैं हमने तो केवल वाल्मीक जी के उगर फल दाता शब्दों का जोकि एक अमुल्य रत्न इस में प्रकाशित होरहे है अनुवाद किया है, देखो वाल्मीक रामायण किष्कन्धा कांड ३६वें सर्ग को यद्यपि इसमें प्रकट रुप से यह वर्णित नही है। परन्तु यदि आप तनिक दत्त चित्त हो इस सर्ग को पढ़ें और विचारें तो आप को विदित होजावेगा कि वास्तविक में अभिप्राय इस का क्या है सर्ग ३७ के ५४ पृष्ट की ४ पाक्ति में जो शब्द देव पित्र गन्धर्व आदि लिखे हैं उन में स्पष्ट विदित होता है कि वड़े सुयोग्य और विद्वान महाराज रामचन्द्र जी के संग लंका के युद्ध में गये थे वाल्मीक रामायण अरण्यकाण्ड के ४०वें सर्ग के ५६ पृष्ट पर मारीच के कथन से विदित होता है, कि रावण के अत्याचार से केवल अल्प वशी ही उस के विरोधी नहीं होगये थे वरंच उस की प्रजा भी उस से प्रसन्न न थी ॥

समस्त मैदान गूंज रहा है और प्रति स्थान जंगी निशान आकाश में उड़ते हुए दीखाई देरहे हैं, जिनको देखकर यह कहना पड़ता है कि किसी राजा ने बाली की मृत्यु श्रवण कर किष्किन्धापर आक्रमण कर दिया है निःसंदेह यही विचार ठीक हैं क्योंकि वह खंग चमक कर और नेजे बरछियां अपनी काल रूपी जिह्वा निकाल २ कर देखने वालों के हृदयों को कंपायमान कर रही हैं, और वीर योधा इनको परीक्षा कर के इन को मियान में डाल रहे हैं और वह युवक अफसर जो एक हाथ से अपनी मूछों को ताओ देरहा है और दूसरे हाथ से किष्किन्धा की त फ इशारा कर कर अपने सिपाहियों से कुछ कह रहा है, मानो हमारे विचार की पुष्टि कर रहा है, हा ! सुग्रीव दीन पर कैसी आपत्ति आन पड़ी वह तो महाराज रामचन्द्र जी की सहायता में तत्पर था यह आपत्ति कहां से उपस्थि हो गई ॥

पाठकगण ! बड़े विस्मित और चकित रूपसे हम इस असाधारण श्रति समुदाय को देख रहे थे और मनमें भान्ति भांति के संदेह उत्पन्न होकर हमें चिंतातुर कर रहे थे कि एका एकी उस तम्बू को देखने से जो बड़ के वृक्ष की दाईं ओर तना है। हमारे विस्मित विचार प्रवाह को कुछ धैर्य हो गया है क्योंकि उस में हमें अपने वीर सेनापति हनुमान जान पड़ते हैं, आहा ? वह देखिये हनुमान कैसे प्रेम से राजा अंगद से मिल कर अब गज से मिल रहा है, ओहो ? वह

तो महाराजा रामचन्द्र व लक्ष्मण और सुग्रीव आदि भी उस बड़े खेमें से निकले हैं, जो राजा जामवन्त और सुखेन के तम्बू के बीच खड़ा है, क्या जाने यह तम्बू राजा इन्द्र जानू का है और यह विदित होता है कि यह सब वीर लंका ऽधिक्रमण के लिये पधारे हैं क्योंकि श्री रामचन्द्र जी प्रत्येक राजा से मिल उसकी सेना को देखते जाते हैं और जिधर दृष्टि करते हैं यथायोग्य सब लोग सिर निवाते जाते हैं जब सब सेनाको देख चुके तो राजा इंद्र जानू के तम्बूमें जो सब से अधिक विस्तृत है लौट आये और इस भांति कहना आरंभकिया॥

सुग्रीव-(महाराज रामचन्द्रजी से) उस अदूर दर्शी रावण को दण्ड देने के लिये प्रत्येक राजा कटिबद्ध हैं, अब केवल आपकी आज्ञा की देरी है॥

रामचन्द्रजी-(कुछ काल सोचने के अनन्तर) सुग्रीव हमारा विचार है कि पहिले किसी को भेज कर मालुम कर लेना उचित है कि सीता जी किस दशामें हैं! और रावण उसके विषय में क्या विचार रखता है यदि वह सीता जी को अब भी भेजदे और अपने दोष की क्षमा चाहे तो हम अब भी इस हिंसा युक्त कार्य्य से हस्त संकुचित करेंगे क्योंकि युद्ध से दोनों को क्लेश और ऐश्वर्यसृष्टि का विनाशव्यर्थ होगा॥

सुग्रीव-(हाथ जोड़ कर) "महाराज वह बड़ा अभिमानी पुरुष है, आत्माभिमान के बिना कुछ समझता नहीं॥

रामचन्द्र-"नहीं कई बेर मनुष्य क्रोध की दशामें

ऐसे कार्य्य कर बैठता है जिनका उसे कदापि स्वप्न में भी करने का विचार नहीं होता, सम्भव है कि स्वरूपनखा ने उस के तमोगुण की अग्नि को भड़का दिया हो और क्रोध में आकर वह यह अनुचित व्यवहार कर बैठा हो और अब उस के विचार बदल गये हों" ॥

सब राजा लोग एक बेर ही बोल उठे "महाराज! आप सत्य कहते हैं परन्तु उस की आत्म महत्वता दूरदर्शिता को उस के निकट फटकने नहीं देती, इस के सिवाय किसकी सामर्थ्य है कि उस अभिमान पुञ्ज क्रोध रूप को सम्मति दे सके"

इन बातों को श्रवण कर रामचद्र जी अतीव विचार सागर में डूब गये और उपस्थित सभ्य भी चुपचाप हो गये और कुछ काल पर्यन्त आप सिर झुका कर कुछ सोचते रहे, फिर कहने लगे "नहीं २ यह उचित नहीं, पहिले अवश्य किसी को भेजना चाहिये" ॥

सुग्रीव तथा अन्य उपस्थित राजा लोगों ने एक मन हो हनूमान की ओर निहार कर कहा "महाराज! इन के सिवाय और कोई नजर नहीं आता जो यह काम कर सके क्यों कि एक तो यह वेद शास्त्र के महान* पण्डित हैं जो बात करेंगे सोच विचार कर करेंगे और दूसरे यह रावण के स्वभाव और लंका के हर एक गली कूचे को भांति भांति जानते हैं ॥

रामचंद्र जी सुग्रीव की वार्तालाप को सुन कर बहुत प्रसन्न हुए और अपनी अंगूठी उतार कर हनुमान को दी और कहा

* देखो वाल्मीक रामायण पृष्ट ६० सर्ग ४३ ॥

"यह अंगूठी सीता जी को देकर हमारी कुशल कहना और उन को धैर्य देकर शीघ्र आना" ॥

हनुमान—"महाराज! यद्यपि मैं अपने आप को इस योग्य नहीं देखता जैसा कि सुग्रीव जी कहते हैं, तथापि आप के प्रताप से इस कार्य्य को पर्याप्त करने का यत्न करूंगा" यह कह अंगूठी पकड़ ली और रामचन्द्र जी के चरणों में सीस निवा प्रणाम करने लगा परन्तु उन्हों ने तत्काल उसे छाती से लगा लिया और बोलेः—

"अच्छा भाई जाइये ईश्वर आपकी सहायता करें"

जब हनुमान चलने को उद्यत हुआ तो सुग्रीव ने कुछ सोच कर अंगद, गज, तार, गन्धमावन, जामवंत और सर्व की ओर निहार कर कहा "आप लोग भी हनुमान जी के साथ जायें तो अच्छा है क्या जाने कहीं इनको सहायता की आवशयकता पड़ जाय परन्तु लंका में जाने से पूर्व कौवीर के स्थान, पोहकरस, सिद्ध देश गाढ़ानदी और मैनाक पर्वत पर जाना, क्योंकि रावण प्रायः इन स्थानों में आया जाया करता है, कुछ आश्चर्य नहीं कि सीता जी वहीं मिल जावें और हम सब की मनोकामना सिद्ध हो" यह सुनते ही सबने मिल कर रामचन्द्र के चरणों में सीस निवा आशीर्वाद ली और सुग्रीव को प्रणाम कर के वहां से चल पड़े। खेद का विषय है कि इन्हों ने इतनी २ कठिनतायें झेल और इतनी दूर की यात्रा की

परन्तु फिर भी निष्फल हुए। तार, अंगद, जामवन्त के उत्साह भंग होगए, गन्धमादन सिर पर हाथ रखकर वहीं बैठ गया, इन की यह दशा देख हनुमान उच्च स्वर से बोले, मित्रो ! तुम्हारी यह दशा देख मैं चकित हो रहा हूं कि आप अभी से साहस छोड़ बैठे हैं, आगे को क्या करोगे ? तनिक विचारो तो सही, तुम लोग सोचो तो सही कि तुम उस की तलाश में हो जिस का कोई नियत स्थान नहीं कुछ चिन्ता नहीं यदि यहां कृतकार्य नहीं हुआ मैनाक पर्वत अभी शेष है वहां देखेंगे लंका में ढूंढेंगे यदि वहां भी भाग्योदय न हुए तो फिर और स्थान देखेंगे, स्मरण रहे कि विना मिले हम भी वापस नहीं जावेंगे, चाहे कुछ ही क्यों न हो वीरो ! जितनी चाहें आपत्तियें क्यों न झेलनी पड़ें, यदि साहस और धैर्य्य को न छोड़ेंगे तो अवश्य कार्य्य सफल होगा तुम भी साहस धर कटिबद्ध हो कार्य्य सफलता के अर्थ यत्न करो घबराना बुद्धिमानों का काम नहीं। हनुमान जी के कथन ने उन साहस विहीन हृदयों में एक ऐसी शक्ति उत्पन्न करदी कि उनके विचार एकाएकी बदल गए कुमलाए हुए मुख कमल एकाएक प्रफुल्लित हो गए, और वह सब उच्च स्वर से बोल उठे "नहीं २ हमने साहस नहीं छोड़ा जैसे कि आप का विचार है निःसन्देह जब लग सीता जी का पता नहीं मिलता तब लग हम लोगों को चैन नहीं पड़ता" ॥

इतना कह कर वहां से आगे को गमन किया, जब मैनाक पर्वत अर्थात् परक शिला पर पहुंचें तो उन्हें विचित्र मन्दिर के चिन्ह दिखाई दिये परन्तु उस मन्दिर में पहुंचने का कोई मार्ग दृष्टिगोचर न हुआ तो अतीव चकित हुए मन में यही विचार उपजा कि सीता जी अवश्य यहीं मिलेंगी, इस विचार ने उनके साहस को और भी बढ़ा दिया और बड़ी सावधानी से द्वार ढूंढने लगे, बड़ी कठिनाई से एक अतीव अन्धकारमय टनल देखने में आई जो पर्वत चीर कर बनाई गई थी, और उस मन्दिर में पहुंचने का एक मात्र यही मार्ग प्रतीत होता था, उस को देख कर सब प्रसन्नता से कूद पड़े और खुशी से उस के भीतर यह कहते हुए चल दिये, "निःसन्देह रावण ने सीता जी को यहीं छिपा रक्खा होगा," जब कुछ दूर उसी अन्ध कूप मार्ग में गये तो और घोर अन्धकार आगया यहां तक कि वह एक दूसरे को देख भी न सकते थे, पांव ठोकरें खा २ कर और भी लज्जातुर कर रहे थे सांस घुटने से यमलोक यात्रा का सन्देह आरहा था, मन संकुचित हो अपना अपूर्व वेग दिखाला रहा था जीवन काल थोड़ा ही शेष भासता था, परन्तु महाभाग शूरवीर हनुमान सब के धैर्य को बढ़ाता हुआ आगे २ केसरी सिंह के समान जा रहा था, एकाएक कुछ चांदनी सी प्रतीत हुई जिसने उनके मुरझाये हुए हृदयों को किंचित प्रफुल्लित

कर दिया और पांव भी अपना वेग दिखाने लगे और थोड़ी देर में यह सब खुले मैदान में पहुंच गये, ओहो! यहां की शोभा देख सर्व वीरों के क्लेश दूर हो गये, और प्रकृत कार्य्य विचार निवृत्त हो गये, अब देखिये यह कैसे साहस से एक वाटिका में भ्रमण करते हुए उस ओर जा रहे हैं, जिधर विचित्र मन्दिर अपनी विचित्र शोभा और मनोरमता से कर्म्मकार की बुद्धि की साक्षी दे रहे हैं इस विचित्र मन्दिर के निकट पहुंच कर उन्हों ने एक वृद्ध तपस्विनी को देखा जो मृग छाला ओढ़ ईश्वर उपासना में मग्न थी, और थोड़ी दूर एक अद्भुत विमान* पड़ा था हनुमान जी ने झुक कर प्रणाम किया और तपस्विनी जी ने अतीव विस्मत हो देख कर कहाः—

"तुम कौन हो और ऐसे कठिन स्थान में तुम्हारा आगमन कैसे हुआ"? हनुमान ने रामचन्द्र जी महाराज की गाथा ऐसे हृदय स्पर्शी शब्दों में सुनाई कि सुन कर उस का हृदय भी चकनाचूर हो गया और ठण्डी सांस लेकर कहा "अच्छा पुत्र! ईश्वर आपकी मनोकामना सिद्ध करें, मैं तुम को भोजन कराने के अतिरिक्त और कोई सहायता नहीं दे सकती"॥

हनुमान जी ने हाथ जोड़ कर कहा "माता जी भोजन की तो इस समय कोई इच्छा नहीं सब आप की कृपा है, हां! यहां से निकलने का यदि कोई और मार्ग हो तो

*देखो वाल्मीक रामायण पृष्ठ ६३ सर्ग ५० किस्कंधा कांड॥

बतला दीजिये क्योंकि यह मार्ग जिस से हम लोग यहां पहुंचे हैं, अतीव कठिन है इससे जाने के लिये बहुत काल की आवश्यकता है और हमारे पुनर्गमन में बहुत थोड़े दिन शेष हैं ॥

तपस्विनी—आप का कहना ठीक है, निस्संदेह जिस का एक वेर इस अन्ध कूप मार्ग में प्रवेश हुआ, फिर जीवत नहीं निकला, (कुछ काल विचार करने के अनन्तर) अच्छा चूंकि तुम उपकारार्थ क्लेश सहन कर रहे हो इस * विमान में (अंगुली से दिखला कर) चढ़ कर आकाश

* वाल्मीक रामायण पृष्ट ६५ सर्ग ५३ किस्कधा कांड ४थे पंक्ति में लिखा है कि उस तपस्विनी ने कहा, कि जितने हमारे पुण्य हैं उन का फल तुम को देती हुं जिस से तुम लोग यहां से चले जाओ तुम लोग अपने नेत्र बन्ध करलो, वाल्मीक जी का कथन है कि यह सुन कर सब ने नेत्र मूंद लिये तब उस ने एक पल में आकाश मार्ग द्वारा उन सब को बाहर कर दिया यद्यपि इस कथन से हमारे लेख की पूर्णरूप से साक्षी नहीं मिलती, परन्तू अनुमान अवश्य होता है कि वही विमान जो वहां पड़ा था तपस्विनी जीने उन को दे दिया होगा क्योंकि आकाश यात्रा और समुद्र पार होने का कारण इस का पुष्टि कारक है, यद्यपि रामायण के पाठ से स्पष्ट रूप से यह कहीं नहीं लिखा मिलता, कि हनुमान जी विमानारूढ़ हो समुद्र पार गये हों परन्तु निम्न लिखित कथन भी हम को इस बात का निश्चय नहीं दिलाते कि उन्होंने कूद कर समुद्र को जिस का पाट ४०० कोस था पार किया हो, १म, [सुंदरकाण्ड पृष्ट १ सू० १ वाल्मीकी रामायण] में लिखा है कि "हनुमान जी ने विचार किया कि जिस मार्ग से देवता लोग गमन करते हैं उस मार्ग से गमन कर सीता जी को ढूंढूंगा। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है

कि हमारे शास्त्रों या पुराणों में हमारे देवताओं का मार्ग कौनसा वर्णन किया गया है, तो इस का उत्तर हम को यही मिलता है "आकाश मार्ग,, अर्थात भूमि से बहुत ऊंचे विमानारूढ़ हो यात्रा करते थे और उसी ऊचे मार्ग को बुद्धिमानों ने देव मार्ग नियत किया था, २य यदि एक शूरवीर से शूरवीर आकाश की ओर कूद कर ऊचे जाना चाहे और वह चाहे भूमण्डल से बहुत ऊचे भी चढ़जाये तो चार पांच गज़ ऊचाई ही से वापस आयेगा हां यदि सन्मुख कूदना चाहे, तो निस्संदेह कुछ दूर तक जा सकता है परन्तु ४०० कोस का पाट इस भांति कूद जाना पूर्णतः असम्भव प्रतीत होता है यदि मान भी लिया जावे तो रामायण के लेख से यह विदित नहीं होता कि हनुमान जी इस प्रकार कूद गये थे। ३य, सुंदरकांड पृष्ट ३ सू० १५० १७ वाल्मीक जी हनुमान जी के वहां से गमन के विषय में वर्णन करते हैं, हनुमान जी की छाया ऐसी प्रतीत होती थी कि जैसे जहाज जा रहा है हनुमान जी का स्वरुप देख कर मेघ भागने लगे और हनुमान जी मेरु पर्वत के समान प्रतीत होते थे जब समुद्र के मध्य में पहुचे तो ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे गरुड़ जी और जब कुछ आगे चढ़े तो बदली में चन्द्रमा के समान कभी गुप्त और कभी प्रकट प्रतीत होते थे अब सब से अधिक विचारनीय विषय यह है कि कूदने वाले की छाया कुछ काल स्थिर रहती है या नहीं दक्षता साक्षी देती है कि छाया प्रतीत तो होती है परन्तु तत्काल लुप्त होजाती है समगामी वस्तू की अपेक्षा यदि हनुमान जी उस विमान में न थे किन्तू वेग शक्ति से कूद गये थे तो जहाज के समान उन की छाया धीरे २ प्रकार से जारही थी और देर तक भिन्न २ आकारों में दृष्टि गोचर होती रही थी इस से स्पष्ट विदित होता है कि वह उछल कर नहीं गये वरञ्च उस विमान पर गये थे ॥

यह सुन कर हनुमान जी और अन्य सब उपस्थित सज्जन अतीव प्रसन्न हुए, तपस्विनी जी को सब ने धन्यवाद दिया और विमान में बैठ कर वहां से समुद्र तट पर जा पहुंचे तो तार ने न जाने क्या सोच कर ठण्डी सांस भरी और कुछ काल तक कुछ सोचता रहा और अन्त में यह कहने लगा, आह! क्या सीता जी का कुछ पता न मिलेगा, उस अत्याचारी ने न जाने उन को कहां छिपा रखा है जो कहीं पता नहीं मिलता है (जामवन्त की ओर देख कर) जामवन्त अब सीता जी के मिलने की तो कोई आशा नहीं रही जहां तहां सब स्थानों में देखा परंतु कुछ पता नहीं मिला, पर्वतों की अन्धकारमय कन्दराओं को देखा और वहां से भी अकृत कार्यता और चकितता के सिवाय कुछ भी न मिला कौवेर सिद्ध देश गाढ़ा नदी, के तट (उन स्थानों में जिन का पता सुग्रीव जी ने दिया था) को देख लिया परन्तु वहां से कोई पता नहीं मिला हां क्या जाने लंका में हों तो हों इधर तो उन का कहीं चिन्ह भी नहीं मिलता, परन्तु लंका में जाना भी सुगम नहीं है, कहीं उस (रावण) को खबर होजावे तो वह किसी को भी जीता न छोड़ेगा, इतना कह कर सिर नीचा कर चुपका होगया तब जामवन्त बोला॥

जामवन्त--भाई इस वीरता का प्रशंसा पत्र हनुमान

जो पर छोड़ा गया है क्योंकि वह उस (रावण) के आचार स्वभाव और निवास स्थानादि को भली भांति जानता है दूसरे यह (हनुमान) रावण के वंश से परिचित है, और यह कई बेर लंका में आप भी जा चुका है उसके कई मित्र भी वहां अवश्य होंगे, और इनको देख कर किसी को कुछ सन्देह भी न होगा ॥

जामवन्त के कथन को सुन कर मुरझाये मुख कमल कुछ प्रफुल्लित से हो गये कृत कार्य्यता ने अकृत कार्य्यता को हृदय से उठा दिया, पहिले तो सब धीरे २ परस्पर बात चीत करते रहे फिर अंगद ने कहा:—

"हनुमान जी ! आपने सुना यह लोग क्या कह रहे हैं ? आप के सिवाय इस कार्य्य को करने वाला और तो कोई नज़र नहीं आता यह लोग तो साहस छोड़ बैठे हैं" ॥

हनुमान—"हां हां मैं सब सुन रहा हूं यदि यही बात है तो लीजिये यहां क्या विलम्ब है" ॥

इतना कह विमान में बैठ एक दो मनुष्यों को संग ले यह जा वह जा, अन्त में तत्काल लोप हो गये और थोड़ी देर में समुद्र पार हो कूटाचल पर्वत पर पहुंच गये, और वहां पहुंच कर एक कन्दिरा में जो (सब की दृष्टि से छिपी थी) विमान को उतारा और आप उस पर्वत की सब से ऊंची शिखा पर न जाने किस विचार से जा खड़ा है ॥

आह ! वहां से जहां कि हमारा शूरवीर जा उपस्थित हुआ है दक्षिणाभिमुख होकर देखें तो विचित्र लीला दिखाई देती है, जिधर देखें सूर्य भगवान की वह रश्मियें जिन की आभा को सन्ध्या देवी के आगमन ने परास्त कर दिया है और वह महान् प्रकाश जिस की ओर देखने से आखें चुंधिया जाती थीं पीला पड़ गया है, तथापि लङ्का के ऊच्च मंदिरों पर अपनी विचित्र ही लीला दिखा रहा है, यहां तक कि देखने वालों को तृप्ति नहीं होती, हां ! नीचे देखने से कई मन्दिरों की छाया जो उस खाई के जल पर जिस ने मानों लंका को चारों ओर से घेर कर आक्रमण किया हुआ है और जिस पर सूर्य की किरणें अपना वेग अभी दिखला रही हैं, देखने से केवल हो कहना पड़ता है कि मन्दिरों की रचना दर्शनीय और अद्वितीय है, देखिये समस्त मन्दिरों की कलसियें जो दिखाई दे रही हैं सब सुनहरी हैं और कारीगर की सुयोग्यता प्रकट कर रही हैं, लंका नगर का उतरीय द्वार जो यहां से अच्छी तरह दिखाई देरहा है, कैसा खुला और ऊंचा है, इस के दोनों ओर दो वीर नग्गी तलवारें उठाये छाती ताने पहरे पर खड़े हैं जिनको हमारा महा वीर बड़ी देर से देख रहा है, कुछ काल पर्यंत तो हनुमान जी इसको देखते रहे फिर न जाने क्या सोचकर नीचे आये और

अपने संगियों की ओर निहार कर कहने लगे :-

"तुम लोग यहां पर विमान की रक्षा करते रहो जब तक कि मैं वापस न आऊं" ॥

यह कह कर कुछ विचारते हुए वहां से चल दिये जब शहर थोड़ी दूर रह गया तो मन ही मन में कहने लगे "नहीं २ मेरा इस समय रावण के पास जाना उचित नहीं, वरंच उचित तो यह है कि जब तक सीता जी के दर्शन न कर लूं सब की दृष्टि से गुप्त रहूं, जिससे कि उस अत्याचारी (रावण) को मेरे आने की खबर ही न हो, क्या जाने वह मेरी अभिलाषा को न जान ले और सीता जी के दर्शन ही न करने दे, (आप ही) हैं !, तो मैं फिर सीता जी को किस विधि से ढूंड सकता हूं मुझ को तो यह भी विदित नहीं कि वह हैं कहां, जब लग किसी को निर्देशक न बनालूं मनोभिलाषा सिद्ध होनी कठिन है, नहीं २ भेद प्रकट की कुछ आवश्यकता नहीं दो दिन में स्वयं पता निकाल लूंगा लंका का ऐसा कौन स्थान है जिसको मैं नहीं जानता, यह कह कर वहीं खड़ा होगया और कुछ काल के अनन्तर कहने लगा "हां निःसन्देह यही ठीक है मैं ऐसा ही करूंगा" और वहां से आगे बढ़ा परन्तु दो चार पद चलकर फिर यह विचार पलट गया और कहने लगा, "ईश्वर न करे कि मुझ को कोई इस समय देखले और रावण को विदित होजाय और

मेरी कामना पूर्ण न हो, और आशा निराशा रूप धारण करले, इस दशा में अकृत कार्य्यता और लज्जा सदैव के लिये मुझे झेलनी पड़े और न जाने श्रीरामचन्द्र जी तथा सुग्रीव के मन में क्या २ विचार उपजें, तो फिर, अब मुझे क्या करना चाहिये" इतना कह विचार सागर में डूब वहीं स्थंभित होगया, और कुछ काल विचार के अनन्तर उसे कुछ युक्ति सूझी और उस के साथ ही, मुखाकार परिवर्त्तन होगया और देह में फुरती सी आगई, और मन ही मन में यह कहने लगा "आहा! महाराष्ट्र से क्यों न मिलूं वह भी तो यहीं रहता है और मेरा परम प्रिय मित्र है वह किसी प्रकार मेरी अभिलाषा को तो प्रकट न करेगा" इतना कह ऊपर की ओर निहारकर "आहा सूर्य्य भगवान् भी अस्त होगये और समय भी बहुत उत्तम है चलो महाराष्ट्र से मिल कर इस बात का परचय लें ॥

१९वां, अध्याय ।

मनो कामना सिद्धि ।

रात्रि महान्धकार युक्त है और आकाश में कृष्ण मेघों के खण्ड और भी रात्रि को भयानक कर रहे हैं हाथ को हाथ नहीं सूझता, हां कभी २ उत्तर की ओर विद्युत चमक से कुछ २ मार्ग दीख पड़ता है ऐसे भयानक समय में हमारा महावीर अपने परम प्रियमित्र के घर

से निकल उस बाग की ओर मुख किये जा रहा है, जो अशोक वाटिका के नाम से सुप्रसिद्ध है, और जो जिस के चारों ओर ऊंची २ दीवारें रक्षा कर रही हैं, और जो आगमन के रोकने का बीड़ा उठा चुकी हैं, हां उत्तर की ओर आवागमन का एक द्वार है परन्तु वहां पर भी एक भद्रवीर खडा है जो रावण की आज्ञा के विना किसी को उस के निकट फटकने नहीं देता दिन के समय तो उसके आकार से ही हृदय कांप उठता है परन्तु रात्री काल को उसकी खड्ग की चमक देखने वाले के हृदय को छिन्न भिन्न कर देती है और आने वालों को प्राणों का भय दे साहस भंग करने में चतुर है आहा! ज्यूंही किसी के आगमन की आहट इस भद्रवीर के करणगोचर हुई और वह ललकार कर बोला । कौन है? जो इस समय अपने प्राणों से निराश हो आरहा है॥

हनुमान—"भाई मुझे आप से कुछ आवश्यक कार्य है"

द्वारपाल—"इस समय यहां काम वाम से कुछ मतलब नहीं इधर आने की कदापि आज्ञा नहीं, यदि प्राण प्यारे हैं तो वहीं से लौट जाओ"॥

हनुमान—भाई! वह काम इतना आवश्यक है कि प्राण भी इस पर न्योछावर हैं"॥

द्वारपाल—बस २ अधिक बातें न बनाओ अन्यथा यह देखो (खड्ग को उठा कर)॥

हनुमान–अच्छा ! जो ईश्वर करे मुझे भी इस समय लौटना लज्जास्पद है ॥

द्वारपाल–"कुछ सोच कर तुम कौन हो और यहां क्या काम है" ?

हनुमान–"मैं एक विदेशी हूं और सीता जी की खबर को आया हूं" ।

द्वारपाल–(हंसकर) आहा ! ठीक कहा स्पष्ट क्यों नहीं कहते कि तुम्हारे रुधिर का प्यासा हूं अरे बावरे ! हम वेतन किस बात की लेते हैं ? केवल इस लिये कि महाराज की आज्ञा बिना कोई सीता जी को न मिल सके जा चला जा नहीं तो एक ही वार से सिर तन से जुदा होगा" ॥

हनुमान–भाई इस में आप का कुछ हरज नहीं अभी उन से मिल कर वापस आ जाऊंगा, क्रोध में क्यों आते हो ॥

द्वारपाल–"क्रोध की कोई बात नहीं तुम को एक वेर तो कह दिया फिर बकवास कैसी" ॥

हनुमान–"हम ने बहुत चाहा और क्षमा की परन्तु खेद ! यह प्रतीत होता है कि तुम्हारे प्राणान्त का समय निकट आ गया है" ॥

हनुमानजी का यह कथन सुनते ही द्वारपाल क्रोधाग्नि से संतप्त होगया और क्रोध से थर २ कांपता हुआ खड्ग ले कर हनुमान पर आक्रमित हुआ परन्तु महावीर जी ने उस की खड्ग को अपनी ढाल पर रोका और एक ऐसा गदा प्रहार किया कि उसका सिर चूर २ होगया और

चक्कर खाकर भूमि पर लेट गया, और उधर प्रकाश ने रात्रि की अन्धकार रूपी ओढ़नी को फाड़ कर मेघों को छिन्न भिन्न कर अपना कार्य्य आरम्भ किया और हमारा महावीर अशोक वाटिका में जा प्रविष्ट हुआ ॥

आहा ! इस समय इस की दृष्टि कैसी प्रसन्नता से सीता जी की तलाश में इधर उधर चारों ओर जा रही है, परन्तु सीता जी को न देख कर चिन्तातुर हो निराशा प्रगट करती है फिर धैर्य्य धार साहस कर आगे ही आगे बढ़ रहा है अब जहां कहीं सघन वृक्ष आगे दिखाई पड़ते हैं, और जिन में कृत्रिम प्रकाश प्रकाशित है वहां पर उस के मन में किसी के होने का विचार उत्पन्न होता है, जब उन वृक्षों के निकट पहुंचा तो एक ऊंचा वचित्र मन्दिर दृष्टि गोचर हुआ, जिस की धरा भूमि तल से कुछ ऊंची है, और चारों ओर दालान बने हुए हैं, और जिस की छत्त को संगमरमर पाषाण के गोल स्तंभ उठाए हुए हैं, और इन दालानों के आगे एक बड़ा भारी कमरा है, जिस को हम एक बारादरी कह सकते हैं जिस में बिना किसी रुकावट के वायु का आवागमन होता है, इस की भीतें संगमरमर की बनी हुई हैं और कई स्थानों में सुनहरी चित्रकारी अतीव मनोरंजक है, और भान्ति २ के जवाहरात भी स्थान २ में जड़े हुये हैं, और सजावट के सामान से सुशोभित है, उत्तरीय दालान में एक विचित्र पलंग बिछा है, जिस के पावे

अपनी अतुल चमक दमक दिखला रहे हैं परंतु इस पर शयन करने वाला एक छोटा सामान्य सा पुरुष प्रतीत होता है, क्योंकि न तो उस पर कोई उत्तम रजाई है और न ही स्वच्छ वस्त्र दिखाई देता है, हां एक साधारण सी चादर ओढ़े करवट लिये हुये पड़ा है, और उस की दहिनी ओर एक वृद्धा स्त्री आसन पर बैठी है, पाठकगण! इस चित्र को देख कर हनुमान जी और भी चकित हुये और वृक्षों की ओट में छिप कर इसका प्रकृत भेद जानने की चेष्टा करने लगे, अभी थोड़ा ही समय व्यतीत हुआ था कि उस पलंग पर लेटी हुई स्त्री की ठण्डी सांस रूपी वायु वेग ने उस वृद्धा के मन को ही नहीं हिला दिया वरंच हमारे महा वीर को भी कंपायमान कर एक पद आगे बढ़ने का साहस बढ़ा दिया, और ज्यूंही यह एक पद आगे बढ़े और उस स्त्री को जिस के विषय में भांति २ के विचार हृदय से मस्तिष्क और मस्तिष्क से हृदय में प्रवेश कर रहे थे पलंग पर सिर नीचे किए हुए बैठे देखा। उस के कृष्ण सुंदर लंबे बाल दोनों कपोलों पर लटक रहे थे और उन के बीच में चन्द्र के तुल्य जो कृष्ण घटाओं में से निकलता है मुखारविंद दिखाई दिया। तो इस को देखते ही हनुमान जी के समस्त संदेह निवारण हो गये और सीता जी के होने का अनुमान प्रत्यक्ष हुआ, और अब अतीव

अधैर्य्य से आंख खोल २ कर उसकी ओर निहारने लगा, इतने में उस वृद्धा ने कहा ॥

सीते ! तेरे रात दिन के विलाप ने देख तेरी क्या दशा करदी है, मति दया की चिन्ता अच्छी नहीं ॥

सीता—हे कृपामयी माता ! आपका कथन निःसदेह सत्य है, मैं आपकी साहार्दिक कृतज्ञ हूं, और यह आप ही की जिव्हा रस अमृत का प्रभाव है जिस ने मेरे मन को स्थिर रखा है । आप के सहायपद कथन मेरे चिंता भार को कभी २ नयून कर देते हैं, अनयथा मुझ में यह शक्ति कहां है कि मैं ऐसी चिंता सेना से सामना करती । माता ! मैं बहुतेरा अपने न सम्भलने वाले मन को समझाती हूं, कई प्रकार के विचारों में डालती हूं परंतु जब मुझे अपनी कामना का जिस के पूर्ण करने के लिये मैं निर्जन वन में निकली थी और जिस की पूर्ति को मैंने अपने हृदय में दृढ़ प्रतिज्ञा की थी । स्मरण करती हूं तो यह मन जल विहीन मछली के समान तड़पने लगता है । हा ! कैसी दुर्भाग्य हूं कि ऐसे समय पर अपने स्वामी की सेवा न कर सकी । उन को धैर्य देना तो दूर मैं अभागनी उलटा उन की चिंता का कारण बनी, यदि मेरे प्राण छूट जाते तो अच्छा था उनके मन को धैर्य तो आ जाता । हाय क्या जानूं वह कहां २ भटकते फिरते होंगे उन को पर्वत शिखरों के गमन से कैसे क्लेश

हुए होंगे, हा ! कहीं लक्ष्मण जी पर संदेह न करलें, कि वह मुझे अकेली छोड़ कर क्यों चला गया, (कुछ काल मौन धारण के अनंतर) हा ! अब उन को कौन समझाये कि वह दीन निर्दोष है उस का रंचक दोष नहीं, मैं ने ही उस को कठोर भाषण करके भेजा था, हाय ! मेरे प्राण कैसे निर्लज्ज और ढीट हैं जो निकल नहीं जाते यमदूत भी तो इन से डरते हैं, हे परमात्मन ! मैं ने कौन सा ऐसा घोर पाप किया है, जिस के कारण मुझ को यह बुरे दिन देखने पड़े, रावण के अनुचित वाक्य सहन करने पड़े । हे धरती माता ! तूं ही दया कर और मुझे अपने गर्भ में धारण कर और मुझे नित्य के क्लेश से छुड़ादे, हाय मृत्यु के सिवा इस से छुटकारे का कोई उपाय नहीं दीखता, इतना कह कर बेसुध सी हो गई मानों चिन्ता पर्वत उस के सिर पर आ गिरा और निर्बल ग्रीवा टेढ़ी होगई ॥

हा ! उस समय उसके क्लेश की सीमा कौन जान सकता है, काटे तो रुधिर की बिन्दु न थी, नारायण जाने इस समय उस की दृष्टि किसको देख रही थी, नेत्र ऐसे खुले हैं कि पलकें परस्पर मिलने का नाम ही नहीं लेतीं, सीता जी के क्लेश और चिन्ता को प्रकाश भी न सह सका, और मेघरूप वस्त्र से मुख ढांप लिया, परन्तु बारबार उस से छिप कर बादलों के बीच में से

निकल २ कर मानों पुकार रहा है कि निःसंदेह सीता जी के क्लेश ने मुझे भी क्लेशित कर दिया है, यह लो वर्षा की बूंद भी गिरने लगी, जिस को देख कर निश्चय होता है कि नहीं २ यह जल नहीं चन्द्रमा के आंसू हैं।

पाठकगण! जानकी जी की यह दशा देख कर हनुमान जी का शरीर रोमांच होगया, सर्वेन्द्र कुछ काल के लिये निस्तब्ध होगईं और भांति २ के विचार क्लेशित करने लगे। हनुमान समय परिवर्तन की निन्दा कर उस को धिक्कार दे ही रहा था, कि मंद समय से सीता जी का रूप धारण कर हृदय में प्रवेश कर गया और जो उस की बाल्यवस्था रामचन्द्र जी से सुनी थी स्मरण आगई, तो यकायक इस प्रकार बोल उठा, हे देव! तेरी घटना का पार किसी ने नहीं पाया, हा! यह वही सीता है जो किसी समय राजा जनक जी की नेत्र ज्योतिः और माता की प्राण प्रिया बनी हुई थी, और जिस की प्राप्ति के लिये बड़े २ राजा महाराजा धनुष के न टूटने से लज्जातुर हो वापस लौट गये थे, और राजा दशरथ का वश रामचन्द्र जी का विवाह सीता जी से होने पर प्रसन्नता से फूला नहीं समाता था, हा! क्या यह वही पतिव्रता सीता महारानी है जिस ने समस्त ऐश्वर्य भोग को परित्याग कर साधिनी स्वरूप में केवल रामचन्द्र जी के साथ इस अभिप्राय से रहना स्वीकार किया था, कि आपात्तिकाल

में इन को सहायक हो अपने पतिव्रत धर्म्म की पालना करूं, परन्तु हे काल ! तू बड़ा अन्यायी और निर्दय है, हे रावण ! तू अत्यन्त भ्रष्टाचारी और अत्या चारी है तुझ को तनिक भी इस की दशा पर दया न आई, और इस पतिव्रता की अभिलाषाओं को विदीर्ण कर दिया, महा राजा रामचन्द्र जी के मन को कल्पा कर लक्ष्मण जी को अपने विनाश के लिये उद्यत किया, स्मरण रख कि अब वह दिन समीप है जब कि तू अपने कर्मों का फल भोगेगा और उस समय पश्चाताप के सिवा कुछ बन न पड़ेगा ॥

पाठकगण ! इन वाक्यों के सुनते ही सीता महारानी का जो मनरूपी जहाज अथाह समुद्र में डूब रहा था, तट पर आ निकला और उस के वह विचार जो उस समय इधर उधर भ्रमण कर रहे थे एक चित्त होगये, वही पलकें जो एक क्षण पूर्व निस्तब्ध हो रही थीं शीघ्रता से चलने लगीं और मनकी बाग को श्रवण इंद्रियों की ओर झुका गईं जिधर से शब्द ध्वनि आई थी और श्री राम चन्द्र जी के प्रेम का प्रवाह वेग से बहने लगा और बेबस हो यह कहने लगी ॥

"भाई ! तू कौन है जो इस आपत्ति ग्रसिता की दशा पर शोक कर रहा है कृपा पूर्वक मुझे दर्शन दे" ॥

हनुमान जी ने तत्काल निकट आकर चरण वंदना की और मान पूर्वक हाथ बान्ध कर खड़ा होगया,

परन्तु इसे देख सीता जी झिझक गई और बहुत समय तक चुपचाप हो कुछ सोचती रहीं और फिर यह कहने लगीं कि तुम कौन हो और यहां कैसे आये हो ?

हनुमान–"माता ! मैं जाति का बानर * और श्री रामचन्द्र जी का सेवक हूं और आप की सुध लेने के निमित्त यहां आया हूं ॥

सीता–(विचार पूर्वक देखकर) क्या कहा स्वामी जी का दास ! कब से ? मैंने तो तुम को कभी नहीं देखा, सत्य कहो ! देखना कोई फरेब न करना मैं अनाथ हूं।

हनुमान–माता आप धैर्यावलंबन करें, किसी प्रकार से न घबरायें, मैं उनका सेवक हूं (अंगूठी निकाल कर) यह देखिये महाराज की अंगूठी है जो उन्हों ने एक मात्र आपको दिखलाने के लिये चिन्ह रूप से दी है, यह कह कर सुग्रीव और बाली की सारी गाथा कह सुनाई, सीता जी कुछ काल तो अंगूठी को देख कर सोचती रहीं और कई प्रकार के विचार इनके मन में उपजते रहे, अन्त

*हमारे वह भोले भाले भाई जिनके मन में क्या जाने अभी तक यही संदेह हो कि हनुमान जी मनुष्य नहीं थे वरन्च बन्दर थे सीता जी के उस वाक्य पर ध्यान दें कि क्या पशु से भी यह पूछने की आवश्कता होती है कि तुम कौन हो, नहीं कदापि नहीं उसका तो आकार ही देखकर हम पहिचान सकते हैं कि वह अमुक भांति का पशु है, और यह प्रश्न एकमात्र मनुष्यों पर ही किया जासक्ता है जो भिन्न २ जातियों और संप्रदायों में विभक्त हैं देखो वाल्मीक रामायण सुन्दरकाण्ड पृष्ट ४ सर्ग ३४ ।

में यही सिद्धान्त ठहरा कि जो कुछ इसने कहा सत्य है ।

सीता– तो मुझ को कबतक यह आपत्ति झेलनी पड़ेगी।

हनुमान–माता आप किञ्चित् फिकर न करें, अब केवल मेरे जाने की देर है, फिर आप देखेंगी कि वानर लोग इस के (रावण के) अहंकार को किस प्रकार ध्वंसन करते हैं और इस की बड़ी सेना को जिस पर इस को इतना गर्व है कैसे दलन करते हैं ॥

सीता–पुत्र ! तेरी बातें सुन कर मेरे अधैर्य धारी मन को धैर्य आया परमात्मा तुम्हारे साहस व बल को वर्द्धन करे, धैर्य बढ़ावे (हाथ से चूड़ी उतार कर) यह चूड़ी स्वामी जी को देना और हाथ जोड़ कर मेरी ओर से प्रार्थना करना कि शान्ति और धैर्य से कार्य साधन करें, राक्षस लोग अतीव निर्दय, अत्याचारी, शठ और नीच हैं कहीं इन के माया जाल में न फंस जाना बड़ी सावधानता से कार्य साधन करना ॥

हनुमान–"(चूड़ी लेकर) आप इन बातों का किंचित् विचार न करें, हम लोग इन दुष्टों के आचार-व्यवहार को को भलि भांति जानते हैं' ॥

पाठकवृन्द ! यहां तो इस प्रकार का वार्तालाप हो रहा था उधर द्वारपाल के मृतक शरीर को देख कर रावण को सूचित किया गया और उस की आज्ञा से बहुत से योधा द्वारपाल के मारने वाले की तलाश में निकले, वह देखिये लोग कैसे भागे चले आते हैं थह लो अब तो इधर को भी आने लगे॥

४०वां अध्याय

रावण के न्याय भवन में हनुमान जी की निर्भय वार्तालाप ॥

अभी दिन का १म, पहर है और दिन भी वही जिस दिन महावीर अशोक वाटिका में गया था, इस समय सूर्य भगवान की तीव्र किरणें भूमि पर जहां तहां धूप की चटाई बिछा रही हैं, भीत और कपाटों की छाया जो कुछ काल पहिले आनन्द पूर्वक भूमि पर शयन किये थी इन को देख निर्बल मनुष्य के समान पीछे २ हट रही है, परन्तु सूर्य की तीव्र किरणें प्रबल-वेग से इन का पीछा किये जारही हैं देखिये जहां थोड़ी देर पहिले छाया थी अब वहां धूप भूमि से आलिंगन कर रही है, इसी प्रकार मनुष्य के जीवन की घड़ियें क्षण २ में परिवर्तन होरही हैं, सारांश यह है कि यह वह समय है कि समस्त संसार प्रकाशित दिन की स्वागत में मग्न है बाजारों में क्रय विक्रय होरहा है, ऐसे समय में हमारा ध्यान जहां पहुंचता है वह लंका नगर के राज्य भवन का वह विस्तृत मैदान है जिस की एक ओर तो राजमार्ग है और तीनों ओर बड़े २ ऊंचे मंदिर आकाश से वार्तालाप कर रहे हैं, जिन की भान्ति २ की दलालियें स्वर्ण व रौप्यमय चित्रकारी, कारीगरों की कौशलता दिखा रखी हैं और स्वर्ण प्रभूत की साची

देरही है जिन को देख कर तत्काल कहना पड़ता है कि स्वर्ण के प्रभूत होने के कारण यहां स्वर्ण का वह मान नहीं, जैसे अन्य देशों में है यद्यपि समस्त मंदिर अपने निराले आकार में अतीव मनोहर और अद्वितीय हैं परंतु वह मंदिर जो आकाश मार्ग में वायु संग भ्रमन कर रहा है सब से बढ़ गया है इस की सुनहरी कलशियें शहर के समस्त मंदिरों को घूर कर अहंकार मय दृष्टि से देख रही हैं इसके आगमन द्वार के सन्मुख एक फुलवाड़ी है जिस में नाना प्रकार के पुष्प खिले हुये कैसे सुंदर और मनोहर हैं जिन के देखने से मन नहीं भरता, क्या जाने यह सर्व साधारण के मनोरंजनार्थ निर्म्मित हैं आहा! जैसे इस द्वार से प्रवेश करें तो एक डेवढ़ी आती है इस के आगे एक विस्तृत दालान है जिस में कृष्ण व श्वेत पाषान से सतरंजी रूप फरश बना हुआ शीशों के समान स्वच्छ और चमकीला है, इस में प्रवेश करते ही पाहिले जिधर दृष्टि पड़ती है वह एक रक्त वर्ण का अत्यद्भुत कालीन है जिस ने इस शतरंजी फरश के अर्द्ध भाग को अपने नीचे ले लिया है और मध्य में एक जड़ाऊ राज्य सिंहासन है जिस पर महाराजा रावण गौरवर्ण, विशाल नेत्र, बड़ा शिर, गोल मुख पर कृष्ण श्मश्रु धारण किये सिंहासन पर विराजमान एक अन्य स्वच्छ वस्त्रधारी पुरुष से जोकि उस की दाहनी ओर बैठा है कह रहा है ॥

"मंत्री जी ! आप ने कुछ मालूम किया है कि वह मनुष्य कौन है" ?

मंत्री-महाराज ! "मालूम क्या, अपनी आंखों से देखा है वही पवन का पुत्र है जिस ने मंगलपुर के युद्ध में वरुण को परास्त किया था" ॥

रावण-(अतीव चकितता से) "हैं ! क्या कहा पवन का पुत्र हनुमान" ।

मंत्री-"जी हां वही वही" ॥

रावण-"नहीं २ कदापि नहीं, तुम भूलते हो ! तुम ने पहिचाना नहीं कोई और होगा" ।

मंत्री-"महाराज प्रत्यक्ष में प्रमाण की क्या आवश्यकता है ! वह स्वयं प्रसन्नता पूर्वक मेघनाद के संग आ रहा है अभी देख लीजियगा" ।

इतने में कोलाहल सुनाई दिया सब की दृष्टि झट पट द्वार पर पड़ी और कुछ काल में जन समुदाय इतना अंदर आगया कि मनुष्य पर मनुष्य गिरने लगा और बड़ी कठिनता से मेघनाद और हनुमान आगे बढ़े । हनुमान को देखते ही रावण को क्रोधाग्नि प्रदीप्त होगई, नेत्रों से अग्नि निकल कर दृष्टि से चिंगारे निकलने लगे, बदन कांपने लगा हृदय में छिद्र होगये, क्रोधान्ध हो हनुमान से कहने लगा ॥

"क्या रणधीर तुम्हारे ही अप्रतिष्ठा से मारा गया यह दूत का काम कब से स्वीकार किया ? और दूत भी

किस के, एक वनवासी के धिक् ! धिक !!"

हनुमान—"महाराज ! शांति और धैर्य्यावलंबन कीजिये, क्रोध करने की कोई बात नहीं मैं दूत नहीं हूं वरंच आप का वही प्राचीन शुभ चिन्तक हूं और इसी विचार ने मुझ को यहां आने का साहस दिया है, नरञ्च मेरी इतनी सामर्थ्य कहां कि आपके विरुद्ध आचरण करता ॥

रावण—आहा ! क्या खूब कैसी विचित्र शुभ चिन्तकता की, उस दीन द्वारपाल का व्यर्थ बध किया, मेरी आज्ञा पर तनिक ध्यान न दिया, बल से वाटिका में प्रवेश किया क्या इसी का नाम शुभ चिन्तकता है ॥

हनुमान—महाराज ! समय ने यही करने की आज्ञा दी कि आज्ञा प्राप्ति के बिना सीता जी से मिलूं और इसी विचार ने रणधीर को मारने के लिये उद्यत किया ॥

रावण (क्रोध से भृकुटी चढ़ा कर) "वह कौन सी बात थी जिस ने तुम से यह अनुचित कार्य्य कराया ॥

हनुमान—रामचन्द्र जी की आपत्ति मय दशा देख कौन पुरुष है जो रुदन न करदे, कौन सा पाषाण हृदय है जो द्रव न जाये तनिक विचारो तो सही कि उन्हों ने किस दशा में और क्यों वनवास धारण किया ? केवल इस लिये कि संसार में यह उत्तम उदाहरण स्थापित हो कि संतान को माता पिता का ऐसा आज्ञा कारी होना चाहिये, राज्य को त्याग मुनिवेश धारण कर, लोगों को

दिखला दिया कि धर्म के आगे धन कुछ चीज़ नहीं, आहा! सीता जी का ऐसी दशा में उन से बिछुड़ना कोई थोड़ी बात नहीं, आप ही कहें कि मनुष्य सर्व श्रेष्ठ जीव कहलाता है केवल इस लिये कि वह बुराई भलाई को पहचानता है, दूसरे की आपत्ति में सहायक हो सकता है। अब आप ही न्याय कीजिये कि मैं उन की ऐसी दशा देख किस प्रकार रुक सकता था ?

रावण—"क्या यह उन को उचित था कि वह स्वरूपनखा को कुदृष्टि से देखते और खरदूषण का वध करते ?

हनुमान—"स्वरूपनखा के विषय में नितान्त मिथ्या और झूठा दुषारोपण है आप यह आशा उन से कदापि न करें हां! उन्हों ने खरदूषण को अवश्य मारा है परन्तु वह भी क्यों? केवल अपनी प्राण रक्षा के लिये जो किसी प्रकार से भी शास्त्र विरुद्ध नहीं है, क्या उन को लज्जा न आई? कि १४ सहस्र सेना ले उन पर चढ़ाई करदी परन्तु उन दोनों के धैर्य और बल को देखें किस विध उन्हों ने उनका नाम धरातल से मिटा दिया, (कुछ सोचकर) आह! मुझे निश्चय होगया अवश्य यही कारण है कि जिस ने आप को इस दुराचार कार्य के लिये उद्यत किया, वरंच आप जैसे बुद्धिमान से ऐसी संभावना कब होसकती थी॥

रावण—"आज तुम्हारा कथन ऐसा अप्रतिष्ठाद्योतक क्यों है, क्या प्राचीन मेल मिलाप को एका एकी दूर कर दिया॥

हनुमान—"नहीं २ मैं आप का वैसा ही सहायक हूं प्राण न्योछावर करने को उद्यत हूं, मुझे प्रतिक्षण आपकी शुभता की धुन लगी रहती है, अधिकतर यहां आने का भी यही उद्देश्य है कि आप को समझा कर सीता जी को ले आऊं और रामचंद्र जी से क्षमा याचना करूं जिससे संग्राम न होने पावे ॥"

रावण—(ईषत हंस कर) ओहो ! क्या जाने इसी विचार से तुम यहां आये हो हमारा तो विचार था कि तुम बड़े विचारवान और हर एक बात को भली भांति समझते हो परंतु यह विचार हमारा मिथ्या निकला, भाई तनिक विचारो कि उन बनवासियों से जिन का नाम लेते लज्जा आती है हमारे लिये प्रार्थना करोगे यह बचन मुख से निकालते हुये तुम को शरम नहीं आती ? क्या तुम्हारे कहने से उस दिव्य स्वरूपा देवी को जिस ने मेरे हृदय में बास किया हुआ है भेज दूंगा ! कदापि नहीं ! जाओ उन से कह दो कि इस व्यर्थ कल्पना को मन से उठा दें अन्यथा प्राणों से भी हाथ धो बैठेंगे ॥

हनुमान ! यह विषय अतीव विचारणीय है भली भांति सोच समझ कर उत्तर दीजिये, ईश्वर की कृपा से आप चारों वेदों के वक्ता और षटशास्त्र के ज्ञाता हैं भलाई बुराई को भली भांति जानते हैं बड़े आश्चर्य का विषय है कि आप जैसे विद्वानों का पर स्त्री के पक्ष में ऐसा विचार

हो, अपराध क्षमा कीजिये ? क्या मन्दोदरी प्रभृति महा रानियें सीता जी से न्यून सुन्दर हैं। नहीं मेरे निकट आप को जिस दुर्विचार ने इस कर्म के लिये उद्यत किया है वही स्वरूपनखा का विलाप और खरदूषण का वध है इस में किञ्चित सन्देह नहीं, क्रोध से संतप्त मनुष्य अयोग्य कर्म भी कर बैठता है, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा सीता जी को मेरे संग भेज दीजिये, आप ही विचारें कि जो मनुष्य देह धारण कर सर्व सृष्टि से पतित हो जाये धर्माधर्म का विचार न करे क्या वह घृणित दृष्टि से न देखा जावेगा ?॥

आहारनिद्रा भयमैथुनं च सामान्य मेतत्पशुभिर्नराणा
धर्मोहितेषामधिकोविशेषःधर्मेणहीनःपशुभिस्समानः॥

रावण—हां हां मैं सब कुछ जानता हूं, तुम्हारी शिक्षा की कुछ आवश्यकता नहीं, जो हुआ सो हुआ परन्तु अब तो वह बात है कि सिर जाय पर बात न जाए, हम अपनी प्रतिज्ञा को भंग नहीं कर सकते, मैं जब लग सीता को अपने रनिवास में नहीं डाल लेता शान्ति नहीं आती, क्या हुआ मन्दोदरी आदि रानियें भी अतीव स्वरूपा हैं परन्तु इस समय जिसका प्यारा स्वरूप मेरे मन में बस रहा है, वह सीता ही है, जैसे चन्द्रमा को देख कर चकोर को तृप्ति नहीं आती उसी प्रकार सीता जी को देखे बिना मेरी दशा है, ज्योति २ ही है चाहे वह दीपक की हो व अग्नि की हो परन्तु पर-

वाना दोनों पर ही आसक्त नहीं होता, इसका यही कारण है कि मनको जो भाया उसी के फंदे में फंस गया ॥

हनुमान–महाराज ! सीता जी को सामान्य स्त्रियों के तुल्य न समझें, वह पतिव्रता है उस के ऊर्द्ध श्वास साधारण ठण्डी श्वास नहीं वरंच संसार को दग्ध करने वाले हैं जिस ने तनिक भी इस के विशय में दुर्विचार किया, मानो लोक परलोक से गया मैं आप से सत्य कहता हूं कि आप इस दुर्विचार को छोड़ दें महाराज रामचन्द्र को सामान्य पुरुष न समझें, धैर्य और पराक्रम का अनुमान खर और दूषण के वध से कर लीजिये, उन के बाणों की शक्ति देखनी हो तो अंगद से पूछिये, जिसका पिता बाली संसार के वीरों में अग्रगण्य था, एक ही बाण से परलोक गमन कर गया आप के कथन से दुर्लक्षण प्रतीत होते हैं, जान पड़ता है कि आप इन्द्रिया शक्ति से अपने वंश का और अपना विनाश किये बिना न रहेंगे, हा ! इस दुष्ट काम ने जिस पर आक्रमन् किया केवल उसका ही वध नहीं किया, वरंच उस के पड़ोसियों को भी नष्ट किया जो इस दुष्ट काम का सेवक बना नेकी का विनाश कर अत्याचारियों का शिरोमणि बना, संसार में घृणित दृष्टि से देखागया, बड़े विषाद का विषय है कि आप जैसे विद्वान् ऐसे चंडाल के फंदे में फंसे, परमेश्वर के लिये अपनी दशा पर दया कीजिये और सीता जी को संग ले कर रामचंद्र जी से

क्षमा मांगिये इस में कुछ संदेह नहीं कि इस समय मेरी बातें आप को अतीव कड़ुवी भासती होंगी, परन्तु स्मरण रहे कि वह समय समीप ही है, जब कि आप मेरे इस समय को स्मरण करके पछतायेंगे और मेरी इन बातों को शुभ सूचक समझेंगे और प्रतिष्ठा से देखेंगे ॥

रावण—(क्रोध में आकर अदूरदर्शी ! बस चुप रहो अधिक बकवास न कर मैंने तेरे वृद्धों का बहुत लिहाज किया उनके उपकार के भारको भली भांति जांचा और भी बहुत से कारण हैं जिन सेमैंने तुम्हारे अप्रतिष्ठा कारक वचनों को सहन किया, तुम्हारी मृत्यु तुम को घेरे हुये है अन्यथा तुम्हारी यह शक्ति कहां कि जो इतने निर्भय होकर बोल रहे हो और हम को धमकाओ, मैं सत्य कहता हुं यदि और कोई ऐसा काम करता तो उस की जिव्हा निकलवा देता, परन्तु तेरे क्षुद्र प्राणों पर दया आती है, प्राण रक्षा इसी में है कि मेरी आंखों से दूर होजा, अन्यथा अभी प्राणों से हाथ धो बैठेगा, उन वनवासियों से कह दो कि मौनसाधन कर पड़े रहें यदि कुछ बल देखना चाहते हैं तोवहभी देखलें॥

हनुमान—(त्योहरी चढ़ाकर) मेरा भी बार २ इसी बात पर जोर देना कि रामचंद्र जी के क्रोध को शांत करना इसी लिये था कि हमारे वृद्धों से आप का प्रेम था अन्यथा हमको क्या ? तुम्हारी वंश और तुम चूल्हे में पड़ो व मिट्टी में मिलो, परंतु यह स्मरण रहे कि जिन लोगों ने राम

चन्द्र जी को आपत्ति काल में साथ दिया है, उन की युद्ध शक्ति को देख कर निस्संदेह कहना पड़ता है कि लंका का विनाश और आप के नष्ट होने का पूर्ण प्रबंध होचुका है केवल मेरे जाने का विलंब है, नहीं २ यह समझें कि दारू में चिनगारी लगने की देर है वह भी सुगल रही है केवल हाथ बढ़ाने की कसर बाकी है, कि आग लगी और कटा कट का शोर मचा * और लंका का तखटा उलटा ॥

हनुमान की पूबल वेग वाणी सुन कर उपस्थित जनों के रोमांच होगये मुख में अंगुली डाल बड़े चकित हो हनुमान

* लंका दाह के विषय में कोई सम्मति प्रकट करने से पूर्व उस समय के आचार व्यवहार का देखना आवश्यक है कि उन से क्या सिद्ध होता है । सुन्दरकांड पृष्ट ८४ सर्ग ५२ ॥

१म, विभीषण के कथन से रावण ने हनुमानजी के प्राणों को छोड़ा, अथात् प्राण रक्षा का प्रण किया, तो फिर कैसे होसकता है कि इसने फिर ऐसा अयोग्य दंड देना स्वीकार किया हो हां ! यदि जीवनदान देने के अनतर हनुमान उससे अप्रतिष्टा से वर्ताव करता, या कोई क्लेश पहुचाने का यत्न करता, तो संभव था कि वह भी अपने विचार वदल लेता, परन्तु दोनों में से कोई वात नहीं हुई । (देखो उपरोक्त पृष्ठ० ५२) तो फिर कैसे संभव है कि एक विद्वान् पुरुष विना किसी कारण अपने विचार को क्षणमात्र में वदल ले (२य,) यद्यपि रामायण के लेख से यह कहीं नहीं मिलता कि हनुमान बंदर (पशु) था । यदि हम इस समय के लिये ऐसा मान भी लेवें तो कैसे होसकता है कि सहस्रशः राक्षसों के होने पर जिसकी सख्या गोस्वामी तुलसीदास जी ने करोड़ों की लिखी है, (देखो तुलसी रामायण बंबई पृ० ६८८ से ६९१) एक बंदर को

की ओर देखने लग गये। और एक सन्नाटा था कि जिसने सब को गोदी में ले लिया रावण के मन की दशा तो ईश्वर

जब कि इसे घसीटते हुये लंका के गली कूचों में ले जारहे थे एक लोहे का खंबा उखाड़ने का अवकाश दिया हो, जिस से हनुमान ने राक्षसों को मार मार कर भगा दिया और स्वयं लंका के मंदिरों पर चढ़ कर घरों को दग्ध करना आरम्भ कर दिया हो यदि यह भी मान लें तो भी बुद्धि नहीं मानती कि ऐसा हुआ हो क्योंकि लंका के मंदिर पक्के थे और पक्के मंदिरों को जब लग भीतर से अग्नि न लगाई जावे उनका दग्ध होना कठिन है (देखो सुंदर कांड पृष्ट-५४) हां यदि घास फूस की झोंपड़ियें मंदिरों के स्थान होता विना चूं चरा हम मानने को तैयार थे परन्तु रामायण में कहीं यह लिखा नहीं मिलता, [३५०] एक थोड़े से काल में समस्त लंका जो चूने से बनी हुई थी, विभीषण और अशोक वाटिका के अतिरिक्त दग्ध होकर कृष्ण राख होजाना जैसा कि उक्त सर्ग में वर्णित है अतीव चकित कारक है ॥

चाहे कुछ ही क्यों न हो हम यह भी मान लेते यदि निम्न लिखित वार्ता हम को संतोष देती, जब जीव उपास्त राक्षस कुम्भ करण को जगाने गया, तो सीता जी के लाने हनुमान के आने का समस्त वर्णन उसे सुनाया परन्तु लंका के दग्ध करने का वर्णन नहीं किया [' लंका का० पृ० ६८-६६ सर्ग ६०] वरञ्च सुंदर कांड सर्ग ५३ पृ० ६५ के देखने से विदित होता है कि सहस्र स्त्रियें बाल बच्चों सहित दग्ध होकर भस्म होगई थीं और सहस्रों गिर कर मर गई थीं २य हनुमान के जाने के अनंतर जब रावण ने उन लोगों को बुलाया जो उस समय अनुपस्थित थे तो परहस्त मंत्री ने आकर कहा कि आप चिंतातुर क्यों होते हैं आप का वह सेना पति हु जिस से देवता दानव गन्धर्व और राक्षस लोग डरते हैं वानरों की क्या शक्ति है कि चूं कर सकें खेद ! मैं उस समय [जब

जाने क्या है; परन्तु उस के मस्तक की तीक्ष्णता के चित्र उस की क्रोधाग्नि को प्रकट कर रहे हैं, आंखें लाल होकर आकृति

हनुमान आया था) अपने घर में आनन्द में मगन था हनुमान धोखा देकर चला गया तो क्या परवाह है। लंका कांड स० ८० पृ० ८० पाठकगण। तनिक विचार तो करें, कि लंका में ऐसा सर्वनाश हो कि सर्व दग्ध होकर भस्मी भूत हों, विशेष करके उसी मंत्री का जैसा कि ६६ सर्ग पृ० ५३ सुन्दरकांड से विदित होता है कि सबसे पूर्व उसी का घर दग्ध किया गया था, तो फिर उसका यह कथन कि मैं अपने गृह में आनन्द से शयन कर रहा था क्या तात्पर्य रखता है ? आप ही न्याय करें (३ य) दुर्मुख मंत्री रावण से कहता है कि आप क्यों विचार में पड़े है, वानर सेना कदापि जय नहीं पा सकती क्या हुआ वह (हनुमान) धोखे से ऐसे कर गया वह चोरों के समान आया था लंका काण्ड स० ८० पृ० ६ पाठक महाशय ! उपरोक्त वार्ताओं को तोलो और विचारो कि इन से क्या सिद्ध होता है ॥

इन से अतिरिक्त और बहुत से वर्णन हैं जिन से लंका का दग्ध होना कदापि सिद्ध नहीं होता और न ही तुलसीदास तथा वाल्मीकि जी इस विषय में ऐक्यमत हैं, वरंच दोनों के कथन में अतीव अन्तर है, बम्बई नगर में प्रकाशित तुलसी रामायण की पृ० ६८८ से ६६१ तक पढ़ने का यत्न कीजिये ४ थ) सकल वेद शास्त्र वर्णन करते हैं कि निर्दोषी का वध और किसी गृह का दग्ध करना महा पाप है तो किस विध मानने के योग्य हो सकता है कि हनुमान जैसे महात्मा ने जिसको रामायण में पण्डित धर्मात्मा माना गया है ऐसा किया हो कदापि हनुमान ने ऐसा नहीं किया तो फिर प्रश्न यह उठता है कि फिर वास्तविक क्या बात थी, जिस को इतना बढ़ा दिया गया है ॥

पाठकवृन्द ! बुद्धिमानों ने जलना या जलाना तीन प्रकार का

पलट गई खड्ग उठाकर उठा परन्तु विभीषण ने (रावण का भ्राता) जो इस की दाहीं ओर बैठा कौतुक देख रहा था, तत्काल उसे पकड़ लिया और बोला ॥

माना है , १म, अग्नि से २य, अन्य के ऐश्वर्य्य को देख ईर्षाग्नि से ३य, दूसरे के कठोर भाषण वा आगामी आपत्तियों की सम्भावना से १ भुक्ताग्नि से तो शरीर जलकर भस्म होजाता है परन्तु मनुष्य का हृदय कमल जो प्रसन्नता की दशा में पद्म के समान प्रफुल्लित होता है उपरोक्त दशाओं में ठीक वैसे सुकड़ा जाता है जैसे थोड़ी सी अग्नि से त्वचा, सो यही अन्तिम दशा लंका निवासियों की समझें, वरञ्च वास्तव में लंका का दाह नहीं हुआ जैसा कि सर्व साधारण में प्रसिद्ध है हां लंका निवासी पुरुषों और रावण का मन हनुमान जी के वीर वचनों और आगामी आपत्तियों की सम्भावना से दग्ध होगया था, इसी प्रकार लंका का स० ७१ पृ० ६६ में लंका का पुनर्दाह लिखा है और जलाने शब्द के अतिरिक्त और कुछ वर्णन नहीं किया ॥

परन्तु जब हम इस पर विचार करते हैं तो जान पड़ता है कि लक्ष्मण और हनुमान जी के आरोग्य होने पर (जिनका आगे वर्णन आएगा उन लोगों के मन कांप गए थे और इन्हें निश्चय हो गया था कि अब रामचन्द्र जी अवश्य जीत जायेंगे, इस लिये यह मनुष्य मुरझा गये थे और सुयोग्य कवि बालमीक जी ने उनके बढ़े हुए दुःख चिन्ता को उन के दाह से उपमा दी थी जिसकी वास्तविकता पर किंचित ध्यान न दे ग्रंथ कर्त्ताओं ने पुनर्लङ्का दाह का वर्णन कर दिया ॥

जहां तक हम रामायण को देखते हैं जान पड़ता है कि अन्य धर्मावलम्बी व अन्य साम्प्रदायक व अविद्या का प्रताप है जिस से बहुत से अन्यान्य (मसाल) विषय रामायण में लिखे गये जिससे आज

हाहा क्या करते हो दूत पर प्रहार करना तुम्हारी प्रतिष्ठा के लिये अनुचित व्यर्थ तुम ने बैठे बिठाए सिर पीड़ा खरीद ली ॥

हनुमान–(शीघ्रता से अपराध क्षमा शीरो पीड़ा ! यह क्यों नहीं कहते कि शिरो पीड़ा होगी और शिरभी न रहेगा॥

यह वचन सुनते ही रावण की क्रोधाअग्नि और भी भटक उठी विभीषणको क्रोध से पीछे हटा दिया और दोचार ऐसे कटु वचन सुनाए कि वह दीन अपना सा मुख ले कर रह गया और रावण ने ऊंचे आवाज से अपने पुत्र मेघनाथ से कहा

सावधान यह जाने न पावे ।

ओहो ! इस आज्ञा के होने की देरी थी, कि कौओं की भांत हमारे सिंह पर टूट पड़े परन्तु इस को देखिये कैसी वीरता और साहस से गदा घुमाता हुआ पीछे हट रहा है, एक भी तो समीप आने नहीं पाता, हा ! हा ! देखो यह नव युवक अक्ष कुमार(रावणपुत्र) एक ही गदा के लगने से कैसे भूमि पर तड़प रहा है, यद्यपि मेघनाथ

अन्य देशीय मिथ्या गाथा समझते हैं देखिये कहां रामायण जिसको आठलाख वर्ष व्यतीत हुए और कहा महाभारत जिसको बने आज लगभग पांच हजार वर्ष ही व्यतीत हुए हैं (देखो लंका काण्ड स० ८० पृ०६६)परन्तु लोगों ने रामायण में महा भारत के हाल व्यर्थ घुसेड़ दिये हैं इस प्रत्यक्ष जान पड़ता है कि वास्तव में वालमीक जी के कृति की नकल नहीं वरंच यह मानना पड़ता है कि वह लुप्त होगई होगी और महाभारत के अंतर लोगों ने सुने सुनाए हाल फिर लिख दिये और यही कारण है कि अर्थों के अनर्थ होगये ॥

और अन्य कई इसके आक्रमण में लगे हुए हैं, परन्तु अब ऐसे लुप्त हो गये हैं जैसे गधे के सिर से सींग, हाहा! इस समय लंका में कैसा कोलाहल मच रहा है चारों ओर से हाहा कार के शब्द हो रहे हैं नर नारियें मकानों की छतों पर खड़े हुए बड़ी चाकितता से देख २ हनुमान की वीरता की श्लाघा कर रहे हैं, और यह वीर कैसी सावधानी से शत्रु दमन करते हुए लंका से बाहर निकल गया है और कूटाचल पर्वत के समीप पहुंचा ही था कि मेघनाथ की सहायतार्थ एक वीर सेना (राजधन) सहाय के लिये आ पहुंची परन्तु हमारे महावीर ने पर्वत पर चढ़ कर इनको ऐसी भुलावट में डाला कि यह इधर उधर देखते ही रहे कि महावीर जी विमान पर चढ़ आकाश मार्ग से समुद्र पार जाता हुआ दिखाई दिया, इस को देखते ही मेघनाथ का रंग उड़ गया लज्जा और चाकितता सब पर छागई, देखिये यह कैसी सूरत बनाकर मृत्यु को जीवन पर महत्वता और भूमि पर पशुत्व बरसाते हुए जा रहे हैं ॥

४१वां अध्याय

सेना आक्रमण

अब हमारा विचार हमको किष्किन्धा के उस विस्तृत मैदान में जो झील पंपाके निकट है और जहां बहुत से लंबे चौड़े तम्बू कनाते लगी हैं। उस समय पहुंचाता है जब कि सूर्यभगवान निस्तब्धावस्था धारण कर पश्चिम गामी हो

रहा है, आहा ! यह कैसा पवित्र समय है कि संध्या देवी के आगम से उन लोगों की आत्मा जिन को परमात्मा की लग्न है कमल के समान खिलकर एकान्त पवित्र स्थान की खोज में व्याकुल हो रही है, परन्तु उन मनुष्यों की आत्मा जो दिन के उजाले की रुकावट को दूर होते देख इन्द्रिय जात कामनाओं की पूर्ति तथा उचित अनुचित व्यवसायों की सहायिका रात्रि की गोद में बैठना चाहते हैं खौफ से सुकड़ जारही है हा ! कैसी शोकास्पद दशा है उन लोगों की जो धर्माधर्म की विचार नहीं करते, प्रिय मित्रो ! प्रकाश कारक सूर्य की प्रकाश युक्त किरणें उन के रुधिर को खुश्क करने में भय नहीं खातीं, और रात्रि के मनोहर तारागण अपनी आंखें निकाल २ कर इनके पाप कर्मों से रोकने के लिये यत्न करते हैं, परन्तु यह अपनी इन्द्रिय शक्ति में ऐसे मदमस्त हैं कि इन सब की किञ्चित परवाह नहीं करते और अपने आत्मा का वध करते हुए पाप करने को उद्यत हो जाते हैं, ऐसे समय में हमारे महाराजा रामचन्द्रजी अपने मानसिक विचारों को भीतर ही भीतर दमन किये कैसे बैठे हैं जैसे खिलने वाले फूल । इतने में लक्ष्मण जी उदास सी सूरत बनाए और सिर झुकाए आकर बैठ गये, और बोले—

महाराज ! हनुमान अब तक वापस नहीं आया ।

रामचन्द्र—हनुमान आज नहीं कल आ जावेगा परन्तु

तुम्हारा प्रतिक्षण चिन्तातुर रहना अच्छा नहीं, देखो वृद्धों का कथन है, कि जीवन के दिनों में जो क्षण चिन्ता और फिकर में व्यतीत हों उनको भी उत्तम समझना चाहिये क्योंकि रुकावट के बिना उन्नति असम्भव है, शत्रुओं के आक्रमण पर दुर्मनस हो खिन्न नहीं होना चाहिये, कठिनता के समय परेशान और निराश होना उचित नहीं, शूरवीर बनो साहस धरो और ईश्वर पर भरोसा रक्खो देखो भविष्यत में क्या होता है ॥

लक्ष्मण कुछ उत्तर देना चाहता ही था कि इतने में हनुमान, सुग्रीव, अंगद आदि डेरे में आ पहुंचे जिनको देखते ही लक्ष्मण भी प्रसन्न हो गये और हनुमान जी से कुछ पूछना चाहा परन्तु वह इसकी ओर ध्यान करने के स्थान में रामचन्द्रजी के चरणों में गिर पड़ा, उन्हों ने तत्काल उठाकर छाती से लगा लिया, इसी प्रकार क्रमशः सब ने पाद प्रणाम किया और यह समाचार कि हनुमान आदि सीता की खबर लेकर आगये हैं एक क्षण में सब सेना में फैल गया, समस्त राजपुत्र रामचन्द्रजी की सेवा में उपस्थित होने लगे, और हमारे महावीर ने सब से पहले सीता जी की चूड़ी रामचन्द्रजी के चरणों में रक्खी और तदनन्तर समस्त व्योरा कह सुनाया, रावण की बुरी बातों को सुन कर उपस्थित महाशयों के मुख क्रोध से लाल हो गये, और उसके हुंकार वाक्य रूप चिनगारे इनके करणों द्वारा

हृदय में प्रविष्ट होने की देर थी कि धूआं बन २ नेत्रों से निकलने लगे, थोड़ी देर तो सब चुप रहे फिर गज ने कहा ॥

बस अधिक विलम्ब का समय नहीं, रावण के आधिष्ठाता युक्त वाक्यों का उत्तर हमारी खड्ग और बाणों के प्रहार भली भांति देंगे, हमें पहिले ही विश्वास था कि वह कुकर्मी सीधे मार्ग पर कभी नहीं चलेगा चारों ओर से यही आवाज गूंज उठी। सार यह है कि उसी समय सम्मति करके नील को रसद एकत्र करने का काम सुपुर्द किया गया, और ऋषभ और बली मुख को सफरमैना सेना का अध्यक्ष नियत कर प्रातःकाल ही चलने की आज्ञा दी गई ॥

प्रातःकाल होते ही असंख्य सेना किष्किन्धा से चलकर सातवें दिन समुद्र के तट पर आ पहुंची नियमानुसार संध्या वन्दन के अनन्तर सब ने भोजन पाया फिर समस्त राजा महाराजा श्री राम चन्द्र जी के निवास भवन में पधारे, और समुद्र के पार होने के विषय में वार्तालाप होने लगी, अन्त में यह निश्चय हुआ कि समुद्र पर एक पुल बांधा जाये जिससे सेना के पार उतरने में किञ्चित क्लेश न हो और यह काम सुयोग्य विश्वकर्मा इञ्जिनीयर के पुत्र नल के सुपुर्द किया

* लंका काण्ड स० १४ ॥

जिसने इस भार को प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार किया और उसी समय सेना को सामग्री एकत्र करने की आज्ञा दी जैसा कि देखिये हर एक सिपाही कैसी दलेरी से कटिबद्ध हो सामग्री एकत्र कर रहा है, दस, बीस, पचास कोस अन्तर का कुछ विचार नहीं, जहां से जो वस्तु मिली तत्काल लाई गई और पुल की तय्यारी आरम्भ होगई ॥

४२वां अध्याय

रावण का दरबार ॥

प्रातःकाल का मनोहर समय है, लंका के राज्य भवनों में प्रत्येक स्थान में हवन हो रहे हैं, सुगन्धित सामग्री की सुगंध प्रत्येक भवन को सुगंधित कर रही है, शामवेद की ऋचायें पंडित लोग ऐसी मधुर वाणी से पढ़ रहे हैं कि सुनने वालों की मानसिक सर्व व्यथायें दूर कर देती हैं हृदय कमल पद्म के समान प्रफुल्लित हो जाता है और केवल मन यही चाहता है कि संसारिक कार्य त्याग इन्हीं को सुनते रहैं, इस समय हमारा दृश्य, लंका का मुख्य दरबार है जहां रावण राज्य सिंहासन पर आरूढ़ है, विभीषण और मेघनाद भी बड़ी सज धज से उस की दाहीं ओर बैठे हैं मंत्री और सेनाधिपति अपने २ स्थान पर नियुक्त हैं, परंतु सब आगामी समय की प्रतिक्षा के लिये ऐसे मौन धारे बैठे हैं जैसे योगीश्वर परमात्मा के ध्यान में, परंतु नहीं परमात्मा चिंतन

शक्ति के प्रताप से उस का मुख तो प्रफुल्लित और अनूप रूप में प्रकाशित होता है और इन के मुख तो परेशान और चिंतातुर दीख पड़ते हैं। आहा? रावण के मुख को तो देखिये कैसा पांडु सा है अकृत कार्यता और उदासीनता टपक रही है, भांति २ के विचार उत्पन्न होकर इस के मस्तिष्क को भ्रमा रहे हैं और चिन्ता से शिर भूमि की ओर झुका हुआ है, उपस्थित दरबारियों में से कोई भी प्रसन्न वदन नहीं दीखता बहुत देर तक सन्नाटा छाया रहा और अन्त में रावण का मुख खुला।

रावण—मालूम नहीं होता रामचन्द्र ने इतनी सेना कैसे एकत्र करली? उस के पास तो चिन्ता खेद और क्लेश आदि की सेना होनी चाहिये थी, यह शूर वीर सेना समुदाय कहां से एकत्र होगया निःसन्देह यह सुग्रीव का पुरुषार्थ है॥

मंत्री—महाराज! इस समय समुद्र के पार कोसों तक सेना ही सेना दीख पड़ती है संहारत खड्गों की जिव्हा और बरछियों की नोकें चमकती हुई दीख पड़ती हैं और समुद्र पार उतरने के लिये बड़े परिश्रम से पुल बांध रहे हैं एक दो दिन में ही पार उतर आवेंगे॥

रावण—ओहो इतनी सेना? और अब समुद्र के पार होने के लिये भी पुल बांध रहे हैं इतना कह विस्मित सा होकर मंत्री की ओर देखने लगा॥

मंत्री—महाराज ! जो कुछ मैंने प्रार्थना की है वह मैंने स्वयं अपनी आंखों देखा है कोई श्रवण मात्र नहीं, समस्त वानरद्वीप के वीर रामचन्द्र की ओर युद्ध के लिये कटिबद्ध हैं ॥

यह सुनते ही रावण चकित हो मंत्री के मुख की ओर देखते का देखता रह गया, पाठक वृन्द ! देखिये यही रावण है जो अपने तुल्य किसी को नहीं समझता था,* आज १० करोड़ सेना के होने पर भी कैसा घबरा रहा है भान्ति २ के विचार हो इसके अन्तःकरण को क्षोभित कर रहे हैं, मुख की आभा भ्रष्ट सी हो गई है समस्त अंग शिथिल हो गये हैं, वही मुख्य दरबार जिस में वीरों की वीरता के उपदेश कायरों के मनों को भी उत्साहित करते थे आज उसी में निरासता और आलस्यता बरस रही है इस का कारण क्या ? धर्म्माधर्म्म की अविवेचना और इन्द्रिय शक्ति का परिणाम । प्यारे पाठकगण ! रावण को ऐसे चिन्तातुर देख कर परहस्त मन्त्री ने कहा ॥

महाराज ! आप क्यों चिन्ता करते हैं हम लोग आप के लिये अपने प्राणों तक को न्योछावर कर देंगे और आप को क्षोभित न होने देंगे । परन्तु यदि आप की यही दशा रही तो हमारे साहस भी वैसे ही नष्ट हो जावेंगे जैसे जल के बुलबुले हो जाते है ॥

---

*देखो वाल्मीक रामायण लङ्काकाण्ड स० २४ पृष्ठ १९ ॥

दुर्मुख—महाराज ! आप व्यर्थ इतनी चिन्ता कर रहे हैं रामचन्द्र की क्या सामर्थ्य है कि हमारा सामना कर सके कुछ भय नहीं यदि वानर लोग भी इसकी सहायता के लिये उद्यत हैं तनिक विचार तो कीजिये कि इन्द्र, यमराज, कुवेर, वरुण आदि क्या इस से न्यून थे। परन्तु कैसे मारे गये जैसे गज के पांव से चीवटियें, निःसन्देह इनको भी तभी तक जीता जानिये जब लग संग्राम नहीं होता ॥

रावण—इस समय जो तुम इस प्रकार की वातें वना रहे हो उस समय कहां थे ? जव हनुमान मेरी प्रतिष्ठा दरवार में भंग करके चला गया था उस वक्त अकेला मेघनाद उसके मुकावले के लिये निकला तुम्हारी शकल तक न दिखाई दी ॥

*प्रहस्त महाराज ! हमें तो खवर ही पीछे हुई थी मैं तो बड़े आनन्द से निज गृह में बैठा था, और इस के सिवा वह तो छिप कर आया और अज्ञात् रूप ही धोखा देकर चला गया ॥

रावण—माना कि तुम लोग उस समय विद्यमान् न थे परन्तु जो विद्यमान् थे उन्होंने क्या कर लिया जो तुम कर लोगे, क्या लज्जा की वात नहीं ? कि वह अकेला और हम लोग इतने। पाठकगण ! इतने में कुम्भकरण भी आगया और वह रावण की वार्तालाप सुन कर बोला

*देखो लंका कांड स० पृ० ८।

राजन्! इस प्रकार चिन्तातुर होने से क्या लाभ है? आप को भलि भांति विदित है कि सत्य के आगे मिथ्या कुछ वस्तु नहीं, फिर यह कैसे हो सकता था कि यह लोग उस वीर को जिस का आत्मा सत्य से प्रकाशित था, जीत सकते, यह तो समझ रहे थे कि आपने यह कार्य उत्तम नहीं किया फिर वह किस प्रकार उसका सामना कर सकते थे। मिथ्या पुंज के विनाशार्थ सत्य रूप एक चिनगारी बहुत है। हा खेद! आप जैसे बुद्धिमान विद्वान इंद्रियों के वश हो जायें, हा! यह चिन्ह वंश विनाश और राज्य अपभ्रंश के प्रतीत होते हैं बड़े ही उत्तम भाग्य हों, जो रामचंद्र जी को जीत सकें, रावण को अशांत देख कर परंतु कुछ भय नहीं एक बेर तो रामचंद्र क्या समस्त वानर वंश को वह बल दिखाऊंगा कि यह फिर इधर को कभी मुख न करेंगे और जब लग मेरे प्राण हैं आपका बाल भी बांका न होने दूंगा॥

विभीषण—जो इन सब की बातें श्रवण कर रहा था बेबस क्रोध में आकर बोल उठा "महाराज! मैं सत्य कहता हूं कि यह मंत्री जितने हैं सब झूठी श्लाघा करने वाले हैं इन में किसी की सामर्थ नहीं जो रामचन्द्र जी का सामना कर सके, यह आप के मित्र नहीं वरंच शत्रु हैं आपने देख लिया है कि अकेले रामचन्द्र जी ने १४ हज़ार राक्षसों का कैसे विनाश कर दिया परन्तु

अब तो उन के साथ समस्त वानर द्वीप प्राण देने को उद्यत हैं, इन सब बातों को छोड़ कर आप केवल हनुमान की वीरता को देखें कि वह किस विध बल दिखला कर निकल गया था, मेघनाथ प्रभृति उस का कुछ भी बिगाड़ न सके और अब वह कैसे कह सकते हैं कि हम रामचंद्र प्रभृति को परास्त करेंगे, यह नितांत मिथ्या है, मेरी बुद्धि अनुसार तो यही शुभ कर है कि आप सीता जी को भेज दें और अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करलें ॥

मेघनाथ-(क्रोध में आकर) "चचा खेद ! तुम वृद्ध होकर ऐसी निम्न बातें करते हो कि दूसरों का साहस भी सुन कर नष्ट होजाये, ऐसा भयभीत होना अच्छा नहीं, यदि पिता जी ऐसा कर्म कर चुके हैं तो कुछ चिंता नहीं परंतु अब हम को डर कर सीता को भेज देना भी उचित नहीं क्योंकि पुरुष का एक प्रण होता है, किस की सामर्थ्य है कि जो मेरे सामने खड़ा होसके, इन्द्र यमराज आदि तो मेरे दर्शन से कम्पायमानहोतेहैं रामचन्द्र प्रभृति क्या वस्तु है ।

विभीषण-मेघनाद ! इस में किंचित् सन्देह नहीं कि तुम बड़े सुयोग्य और वीर हो परन्तु देखो धर्मशास्त्र में लिखा है कि यदि पिता कोई ऐसा अनुचित काम करे जो धर्म के विरुद्ध और उसकी प्रतिष्ठा के अयोग्य हो, तथा वंश विनाश कारक हो, तो ऐसी दशा में सन्तान को उचित है कि उनको समझाकर यथार्थ मार्ग पर लाये

यदि वह न माने तो उस से अलग होजाये, इस लिये हे पुत्र! यह तेरा धर्म है कि महाराज को समझाकर उस का यह व्यर्थ विचार दूर करो, नहीं तो स्मरण रक्खो कि बुद्धिमानों के निकट तुम बुद्धिशील नहीं गिने जाओगे (रावण की ओर निहार कर) महाराज! मैं फिर प्रार्थना करता हूं, कि सीताजी को भेजकर आप निश्चिन्त हो राज्य कीजिये।

विभीषण की बातें श्रवण कर रावण का मुख क्रोधसे लाल होगया, और क्रोधाग्नि से संतप्त होकर बोला॥

विभीषण! मुझे परम खेद है कि गृह शत्रु जो सुनते थे वह तुमको ही देखा। अरे! कृपाल यह तो हमको प्रत्यक्ष प्रतीत होगया है, कि गुप्त रीति से तू रामचन्द्र से मिला हुआ है, और हमारा अशुभ चाहता है, भला मेघनाद को क्यों बहका रहा है। अफसोस! कि तुम मेरे भाई हो अन्यथा अभी इन बातों का परिणाम देख लेते, अब यदि भला चाहते हो तो मेरी आखों से दूर होजाओ, तुम्हारा यहां रहना मेरे लिये आखेटक के उस कृत्रिम गजके समान है जिसको देख वनके हाथी सजातीय समझ उसके पास आ जाते हैं और बेचारे अपने प्राणगंवाते अथवा बन्धन में पड़ते हैं॥

विभीषण—महाराज! यदि आपका यही विचार है तो सत्य वचन मेरा भी नमस्कार है, इतना कहकर अपने मंत्रियों को संग ले विमान में बैठकर रामचन्द्र जी के पास चला गया, जब विभीषण चला गया तो रावण ने सक-

सारण मंत्रियों को दशावलोकनार्थ रामचन्द्र जी की सेना में भेजा और मेघनाद प्रभृति को युद्ध सामग्री एकत्र करने की आज्ञा दी ॥

तिरतालिसवां अध्याय

सम्मति

अब हम अपने पाठकगण को जिस स्थान का चित्र खेंच कर दिखलाना चाहते हैं वह समेल गिर पर्वत है, और जो लंका नगर से दक्षण की ओर थोड़ी दूर है, यद्यपि यह पर्वत ऊंचाई में बहुत ऊंचा नहीं परन्तु लम्बाई चौड़ाई में सब से बढ़ कर है, इस पर चढ़ कर जो प्राकृतिक दृश्य दिखलाई देता है वह अतीव मनोहर है एक ओर समुद्र का जल अपनी अनुठी लहरे दिखता रहा है, जिस पर सूर्य की किरणें इस की शोभा को और भी बढ़ा रही हैं रय, और लंका का दृश्य दीख रहा है, और इधर उधर हरित वर्ण के वृक्ष झूमते हुए और भी आनन्द बढ़ा रहे हैं। और इन के बीच में कई स्थानों में तम्बू तने हैं, और ठौर २ पर युद्ध के झण्डे और भी शोभा बढ़ा रहे हैं, इन सब के मध्य में वह तम्बू जो समस्त तम्बुओं से ऊंचा और सुंदर है और जिसके इतस्ततः नंगी तलवारें निकाले बड़े २ युवक फिर रहे हैं, और जिस पर सब से ऊंची रक्त वर्ण की ध्वजा उड़ती हुई शत्रुओं के मन को हिला रही है, महाराज रामचंद्र जी का डेरा है, जिस में वानरद्वीप के राजा और

बीर बैठे हुए हैं †अंगद के अकृत कार्य हो लौट आने तथा रावण की अदूर दर्शता पर खेद प्रकट कर रहे हैं ॥

सुग्रीव–महाराज ! आप व्यर्थ खेद प्रकट कर रहे हैं। वह बुद्धि विहीन वंश का शत्रु जब तक युद्ध क्षेत्र में हमारे योधाओं के हाथ न देख लेगा अपने हठ को नहीं छोड़ेगा ॥

‡ सुखेन–निःसंदेह सुग्रीव सत्य कहता है अब विलम्ब का समय नहीं, जहां तक सम्भव हो शीघ्र लंका का घेर लेना उचित है।

विभीषण–"आहा" आप लोग क्या विचार रहे हैं, किस सोच में पड़े हैं रावण तो अपना पूर्ण प्रबन्ध कर युद्ध के लिये उद्यत है ॥

सुग्रीव–"क्या इस विषय में कुछ ताजा समाचार आप को मिला है" ?

---

† महाराज रामचद्र जी ने अगद को भेज कर एक बेर फिर रावण को समझाने का यत्न किया परन्तु अभागी रावण अपने हठ धर्म को छोड़ने को उद्यत न हुआ। कई ग्रथ कर्ताओं ने लिखा है कि अगद ने रावण के दरबार में जाकर अपना पद इस नियम से जमाया था कि यदि रावण या उस का कोई अध्यक्ष इस के पांव को भूमि से उठावेगा तो वह रामचन्द्र जी को युद्ध यत्न त्याग और सीता जी को ऐसे ही छोड़ देने के लिये तैयार करेगा, परन्तु वाल्मीकी रामायण में यह कहीं नहीं लिखा और न ही किसी अन्य वश जाति इतिहास लेखक ने इस बात का वर्णन किया है देखो वाल्मीकी रामायण सर्ग ४१ लका कांड पृ० ४४।

‡ यह धर्म्मराज का पुत्र था।

विभीषण—हां ! हां ! अभी मेरे मंत्रियों ने खबर दी है कि अंगद के आने के अनन्तर रावण ने पूर्वी द्वार पर परहस्त, दक्षिणी द्वार पर महोदर, पश्चिमी द्वार पर मेघनाथ और उत्तरी द्वार पर सकसारण को असंख्य सेना सहित नियत किया है॥

सुग्रीव चकित हो रामचन्द्र जी की ओर देखने लगा, तब रामचन्द्र जी ने कहा।

(कुछ काल सोचने के अनन्तर) अच्छा परहस्त के सन्मुख युद्ध करने को विभीषण, कामोह महोदर से, सत बली और अंगद मेघनाथसे तुम (सुग्रीव) और गजसकसारण के सामने हम और हनुमान रहेंगे, मेघवर्ण, हेमकूट, पालोपगम, राजा सूर्य्य के पुत्र और सोमुख तथा दुर्मुख, ब्रह्मा के पुत्र यहां की रक्षा में नियुक्त हों, गवाच्छगवो, नल, नील, और जामवन्त, यह चारों हम लोगों की सहायता के लिये उद्यत रहें और युद्ध के समय जहां पर आवश्यकता हो सहायता के लिये पहुंच जायें।

लक्ष्मण (हाथ जोड़कर) महाराज मैं आपको अकेला नहीं जाने दूंगा, मैं आप के चरणों के साथ रहूंगा।

रामचन्द्र—(कुछ विचारने के अनन्तर) अच्छा तुम ने भी उत्तरी द्वार पर हमारे संग रहना।

४४वां, अध्याय।

लंका दुर्ग को घेरना।

विद्यु१ नभ मण्डल में गर्, चमकज्यों असिधारा।

सुखरामदास लंका नगरी के, घिरे गये सकल दुवारा ॥

अमृत वेला है, समेलगिर के इतस्ततः के उद्यान में जहं कि थोड़ी देर पहिले घोर अंधकार युक्त रात्रि ने शांतिनिशब्द को विस्तृत कर रक्खा था, इस समय वानरद्वीप के शूरवीरों और योधाओं से भरपूर हैं साहसी उद्यत योधा भांति २ के वस्त्र पहिर खड़े हैं इन के तीव्र वेगी घोड़े जिन के रोम २ से वीरता टपकता है इनको मौन धारण किये खड़ा नहीं रहने देते सिरों को हिला २ पाओं को उठा २ भूमि पर मारते हुये कनौटियें बदल रहे हैं, जिन पर सवार नेज़े ताने खड़गें निकाले बैठे हैं और वाग डोरें इस जोर से खेंचे हुये हैं कि इन दोनों की ग्रीवा दोहरी हुई जाती हैं और इस से अतिरिक्त इस बात का तनिक विचार और परवाह न करके किसी आने वाले समय की परतीक्षा कर रहे हैं इन के आगे सहस्त्रशः पैदल खड़गें निकाले छाती ताने आगे खड़े हैं और इन की तलवारों पर सूर्य की किरणें पत्तरा २ कर पड़ती हैं और इतस्ततः अपनी दमक को विस्तीर्ण कर रही हैं, देखने वालों की दृष्टि इसको देख कर लोहे की दीवार के धोखे में आजाती है इन के आगे वह वीर सेना है जो गदा युद्ध मे पूवीन और अद्वितीय है और जो उन के आगे है वह धनुष विद्या में निपुण हैं जिन के तीर अजगर के समान मुष्टि पूमाण जिन्हा

निकाले भयानक समय दिखा रहे हैं जब सब सेना भली भांति कटिबद्ध होकर खड़ी होगई तो प्रत्येक सेनापति अपनी अधीन सेना को वीरता प्रकाशक शब्दों से साहस बढ़ाने लगा, यद्यपि इस समय बड़े २ योधाओं के शब्द सुनाई देरहे हैं परंतु इस समय साहस वर्द्धक बल युक्त जो शब्द हमारे कानों में पड़ रहे हैं वह हनुमान जी की गर्ज के हैं सुनिये क्या कह रहे हैं वीरो ! सुभाग्यवश वह समय आगया है जिस की तुम चिरकाल से परतीक्षा कर रहे थे और मन ही मन में विचार परवाह काल में फंसे हुये थे आज तुम्हारी उन तलवारों का बल जो चिरकाल से अपनी मियानों में पड़ी हुई तड़प रही थीं देखने का समय आगया है मुझ को इस बात के कथन की आवश्यक्ता नहीं कि वानर द्वीप के भाग्य का फैसला आप लोगों के साहस पर निर्भर है क्योंकि तुम लोग स्वयं अपने देश के क्लेशों को समझ रहे हो, और देशीय स्वतन्त्रता का भार अपने पर ले चुके हो, हां इतना कथन कर देना आवश्यक समझता हुं कि यदि तुम लोगों ने तनिक भी आलस किया तो स्मरण रहे कि केवल आप लोगों को ही लज्जा सहारनी न पड़ेगी वरंच वानर द्वीप का बच्चा २ इस के परिणाम का भागी होगा, राक्षस लोग पहिले से भी अधिक क्लेश देंगे और इस से अति- रिक्त तुम्हारे देश पर जीवत मृतक पद प्राप्त होगा,

वीरो ! युद्ध भूमि में शत्रु पर आक्रमण कर प्राण दे देना सच्चे सिपाहियों का धर्म्म है, ऐसे समय उपदेश करने की आवश्यक्ता नहीं, हां इतना स्वयं अवश्य विचार लें कि यदि तुम लोगों में कोई दुःसाहसी हो व संग्राम से डरता हो वह जिस को अपने प्राण प्रिय हों, वह खुशी से खड्ग त्याग अभी चला जावे हम को भी उस की आवश्यकता नहीं" ॥

सिपाही—उच्च स्वर से नहीं २ हम में कोई भी ऐसा कायर नहीं है हम लोग जीवन देने को उद्यत हैं अभी आप को विदित हो जावेगा, कि हम किस प्रकार राक्षसों का का वध करते हैं हम हमारे बान किस विध उनके अपवित्र शरीरों में धंसकर उनको नष्ट करते हैं, महाराज ! आप धैर्य्यावलम्बन करें हम लोगों में कोई ऐसा भयातुर नहीं जो संग्राम में पीठ दिखला वंश को कलंकित करे और वानरद्वीप का शत्रु कहलाये, हम ने राजपुत वंश में इस लिये जन्म धारण नहीं किया, कि प्राण बचा कर घर में जा बैठें हमारा राजपुती रुधिर हमारे शरीर में खौल रहा है हमारी पिपासु खड्ग और भयानक तीर शत्रु वध के लिये बड़ी अधीरता से आप की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे हैं ॥

हनुमान—(प्रसन्न होकर) हां ! हां ! आप लोगों से यही आशा है, 'और मुझे पूर्ण विश्वास है' कि तुम्हारे हाथ

से राक्षसों का बचना कठिन वरंच असम्भव है इस प्रकार हमारा महावीर सेनापति कह ही रहा था कि शंखों की ध्वनि कानों में पड़ी जिस को सुनते ही सब सेना ने दुर्ग पर आक्रमण किया, सवारों के आगमन से भूमि कांप उठी, रथों और शस्त्रों की झनझनाहट और गदाओं के प्रति क्षणक दुर्ग द्वारों पर प्रहारों से आकाश गूंज उठा, बाणों की वर्षा से सूर्य भगवान् की तीव्र किरणें भी मध्यम पड़ गईं युद्ध सम्बन्धी बाजों की ध्वनि वायु में गूंज कर वीरों का साहस बढ़ाने लगी ॥

उधर दुर्ग (किला) से सेना पतियों (परहस्त और मेघनाथ आदि) के वीर सिपाहियों ने भी अपने रुधिर पिपास. बाणों से पूर्ण रूप से उत्तर देकर वानर लोगों को तंग कर रक्खा है, क्या मजाल है कि एक बान भी खाली जावे, आहा ! क्षणमात्र में वीरों के रुधिर से भूमि लाल हो गई, सैकड़ों घायल वीरों के घावों से रुधिर के फव्वारे उछल रहे हैं, और कई एक विघातक संग्राम भूमि में शयन किये पड़े हैं परन्तु वानर लोग संग्राम में ऐसे तत्पर हैं कि उनकी ओर तनिक ध्यान भी नहीं करते, हां राक्षस उनकी यह दशा देख कर रावण के जय जयकारे बुला रहे हैं, वीर हनुमान सुग्रीव और अंगद इन जयकारों से तनिक भी नहीं घबराते और अपने बाहुबल प्रताप के सहारे बड़े वेग से धनुषों को

स्थान २ वीरों को छोड़ रहे हैं, यदि कोई विचार मन में उपजता है तो वह यह कि रावण की सेना तो ऊंचे दुर्ग छिद्रों से इन पर बाण चला रहा है और इन के बाण व्यर्थ जारहे हैं इसी लिये समस्त सेना ने द्वारों पर आक्रमण किया है कि उस को तोड़ कर भीतर चले जावें यद्यपि राक्षस लोग नाना प्रकार से उन को रोक रहे हैं परन्तु नहीं वानर लोग बाणों की वर्षा और अपने प्राणों का तनिक भय न कर अपने कार्य में तन मन में दृढ़ हैं और द्वार भंग करने में तत्पर हैं ओहो ! कैसे बल से गदा प्रहार कर रहे हैं जिन के धमाधम के शब्द से कान भी बहरे हुये जाते हैं वह लो ! उत्तरी द्वार तो टूट गया और वानर लोग छाती ताने केसरीने सिंहों के समान भीतर घुसने लगे, इधर परहस्त की सेना ने बड़ी वीरता से इन को यहीं रोक लिया अब तो आक्रमण कर्त्ताओं का एक पद भी आगे न जा सका वरंच बंधन माली और जम्बू माली के अधीन सेना ने तो यह वीरता दिखलाई कि वानर लोगों को कुछ पीछे ही हटना पड़ा और विस्तृत मैदान में जो लंका दुर्ग के बाहर है परस्पर युद्ध होने लगा एक पल भर में वीरों की तीक्ष्ण धार खड़गों ने सहस्रों योधाओं को सदैव के लिये भूमि पर सुला दिया नेज और बरछियें निर्भय हो वीरों की ग्रीवा का रुधिर पान करने लगीं गदा प्रहार जिस

पर हुआ उस का सिर फट गया और बेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा, परस्पर बड़े वेग से खड्ग अपना काम करने लगीं,

किये आक्रमण जब हनुमाना, रण में मचा महा घमसाना,
तोड़ दियो परहस्त अभिमाना, गर्जि गर्जि अतिशय बलवाना ॥

मेघनाथ प्रहस्त को पराजित देख सहायतार्थ आया और सिंह के समान गर्जता हुआ आक्रमण करने लगा, परन्तु देखिये वीर लक्ष्मण जी ने उसे किस प्रकार रोक लिया है, महाराज रामचन्द्र जी ने लक्ष्मण जी की यह वीरता देख शाबास शाबास कही और उधर जंगी बाजों की ध्वनि के शब्द से आकाश गूंज उठा और वीर सुखेन के शंख का शब्द सुनते ही गज और गवाक्ष भी आ गर्जे, मेघनाथ ने क्रोधित हो ऐसे वेग से लक्ष्मण जी पर गदा प्रहार किया कि यदि उस के मस्तक पर छूजाती तो सिर टुकड़े २ होजाता परंतु रथवान् की बुद्धि देखिये कि कैसे शीघ्रता से रथ को चक्र दे बचा कर लेगया है रथवाही की इस फुर्ति ने मेघनाथ की क्रोधाग्नि को और भी बढ़ा दिया और वह अतीव क्रोध से बाण वर्षा करने लगा परंतु इस का उत्तर वीर लक्ष्मण जी साथ के साथ ही देरहे हैं, गज गवाक्ष ने भी बाण वर्षा से राक्षसों का नाक में दम कर दिया, आशा थी कि शीघ्र ही राक्षस लोग पीठ दिखलाते परंतु परहस्त और निकुम्भ के सहायतार्थ आ पर उन का साहस बढ़ गया और

उखड़े हुये पद फिर स्थिर होगये और बड़े वेग से गर्जते हुये आक्रमण करने लगे, आहा ! राक्षसों को रावण की जय २ पुकार कर आक्रमण करने की देर थी, कि महाराज रामचन्द्र जी की सेना में क्रोधाग्नि भड़क उठी, वीरता के मद से उन्मादित हो साहस प्रवाह में सवार होकर परस्पर एक दूसरे की सुध भूल गये और तीक्ष्ण खड्गें वीरों की कड़ी अस्थियें चबाने लगीं, तीक्ष्ण बरछियें पसलियों से रुधिर प्रवाह चलाने लगीं, एक क्षण में सहस्रों जीव मारे गये, अंगद और हनुमान के क्रमशः आक्रमणों ने राक्षस की सेना में हलचल डाल दी, उनके पांव मैदान से उखड़ गये, सुखेन की वीर सेना तो यही कह रही है जिस प्रकार हो सके आज ही इन का विनाश करदें, परन्तु सूर्य्य भगवान् अधिक विनाश न देख सका और पश्चिम दिशा में जा छिपा और वेवश हो शूरवीरों को अपना जोश कल पर रखना पड़ा ॥

संघार रात्रि ॥

अर्द्ध रात्रि का समय है जब कि घोर अन्धकार के होने से एक हाथ को २य, हाथ प्रतीत नहीं होता, घटा टोप तिमिर चारों दिशाओं में छारहा है समस्त संसार अन्धकार मय प्रतीत होता है, सुमेरगिरि की ऊंची २ चोटियें इस समय अतीव भयानक प्रतीत होती हैं, परंतु इसकी उस समतल भूमिका से जहां पर कृत्रिम प्रकाश

से उजाला होरहा है, जहां बहुत से तम्बू दिखाई देते हैं, और जहां से कुछ मनुष्यों के बोलने की आवाज भी आ रही है वह प्रायः वही सिपाही हैं जो महाराजा रामचंद्र जी के कैम्प के रखवाले हैं, आहा ! निःसंदेह यही ठीक है वह देखिये समस्त सेना के इतस्ततः कैसे २ जवान नंगी तलवारें कांधों पर रखे, युद्ध के लिये उद्यत ऐसे देखने में भासते हैं जैसे दीवार खड़ी है, क्या सामर्थ्य है कि पक्षी भी इन की आज्ञा के बिना अंदर घुस सकें, या पास भी आसके । पाठकगण यह दीवार एक स्थान ही नहीं वरंच तीन स्थानों में, दो दो सौ गज के अंतर पर इसी प्रकार रखवाले खड़े हैं। क्योंकि रात्रि में शत्रु आक्रमण न कर सके, हैं ! यह सब बातें करते २ चुप्प क्यों होगये इन के मुख बंद क्यों होगये ? क्या इन पर निद्रा ने अपना वेश डाल दिया है या मौन धारण की आज्ञा मिल गई है, नहीं महाराज ! यहां कुछ भेद है, वह देखिये वह आश्चर्य प्रकाश की चमक जो प्रायः पहले के चक्र (ब्रिगड) से आरही है, उसने इन के मुख को बंद कर सचेत कर दिया है और यही कारण है कि यह लोग बड़े चकित हो उसी ओर को निहार रहे हैं, न जाने इस में क्या भेद है कि देखते २ समस्त सेना में हलचली मच गई है और अब प्रत्येक सिपाही शास्त्रास्त्र धारण किये इशानकोण की ओर जारहा है और क्षण भर में समस्त सिपाही एक २ गज के अन्तर

पर कटिवद्ध हो स्थित होगये हैं एकाएक शंख ध्वनि की गूंज कानों में आई, आहा ! यह शंख ध्वनि नहीं थी वरंच किसी कमानी वाले यंत्र की कूक थी, जिस से सुनते ही सेना ने दाया पांव उठाया और सब के सब इस प्रकार आगे बढ़े जिस प्रकार आज कल की सेना "क्युइकमार्च" के शब्द से आगे बढ़ते हैं, महावीर हनुमान जी दाहीं ओर सेना के आगे जारहे थे कुछ दूर ऊपर जाकर न जाने क्या कहा कि जिस को सुनते ही उस के अधीन की सेना तीन भागों में विभक्त होगई और इसी प्रकार से सामन्त अंगद भी अपनी २ सेना को लेकर आगे बढ़े और कुछ ही दूर आगे बढे होंग कि शत्रु ने आक्रमण कर दिया और नील ने जिस के अधीन यह विभाग था इस वेग से शंख बजाया कि आकाश भी गूंज उठा, पशु पक्षी भी भयभीत हो अपने २ घौंसलों में दबक गये, और इतने अवसर में हमारा वीर सेना लेकर शत्रु पर जा टूटा और तीव्र संग्राम होने लग गया और दोनों ओर के सिपाही बाण वर्षा करने लग गये । आहा २ इस समय यदि कुछ सुनाई देता है तो यही कि " मार लो मार लो जाने न पावे' थोड़ी देर में सहस्रों वीर अपनी वीरता दिखला मृत्यु शय्या पर लेट गये, कई तन शिर से भिन्न होकर असार संसार की साक्षी देने लग गये जब लग सेना में कुछ अन्तर रहा और बाण वर्षा करते

रहे परन्तु अब तो खंग की फटाफट की आवाज और गदा महारों की चोट वीरों की कठिन अस्थियों के तोड़ने वाली ध्वनि सुनाई देने लग गई, या आखों को चुन्धया देने वाली बरछियों की तीक्ष्ण नोकें साहसी वीरों की पसलियों में छेद करती हुई दिखलाई देती हैं, आहा ! जूंही धूम्र सेनापति के शिर पर अंगद ने गदा की वार की और वह वार सह न सका और मृत के समान अचेत हो गिर पड़ा और इस को गिरते देख रावण की सेना में कोलाहल मच गया, सब के सब क्रोध में आ रामचन्द्र जी की सेना पर आक्रमित हुये । आहा ! मेघनाथ और परहस्त को देखिये कैसे क्रोध से आ वानरी सेना को काट रहे हैं दीन अंगद यद्यपि घाओं से घायल होरहा है तथापि शत्रुओं पर वार करने से तनिक त्रुटि नहीं करता, वीर हनुमान जो निकुम्भ से संग्राम कर रहा था अंगद पर शत्रुओं की प्रबलता देख क्रोध से संतप्त होगया, जामवन्त को उस के सन्मुख छोड़, नल और नील को साथ लेकर आपत्ति की भान्ति मेघनाथ आदि पर जा टूटा, इन को पड़ते देख सब के साहस बढ़ गये और वीरता के मद में ऐसे मादित होगये कि वही मशालें जो प्रकाश का काम देरही थीं, नेज़े और बरछियों का काम देने लगीं । हमारे महावीर बली हनुमान ने इन का ऐसा साहस देख उच्च स्वर से कहा

"निःसन्देह हमें इस समय प्रकाश की कुछ आवश्यकता नहीं चमकीले बाणों के फल, तीरों की मुखियां और तलवारों की धारें प्रकाश के लिये बहुत हैं यही रात्रि दीपक है वीरो! इन अधर्मी नपुंसकों की क्या सामर्थ्य है, कि तुम्हारे सामने खड़े रह सकें मारो! मारो!" इस कथन ने वानर लोगों के मन में एक अतीव शक्ति उत्पन्न करदी, और आगे बढ़कर घोर भयानक संग्राम करने लगे, एक क्षण में मृतकों के ढेर लग गये, हनुमान और मेघनाथ का हाथों हाथ संग्राम होने लगा, देर तक परस्पर मल्ल युद्ध होता रहा परन्तु कोई भी विजय न पा सका, मेघनाथ की यह कार्य्य वाही श्लाघनीय है कि अभि तो इधर ऐसे संग्राम में कटिबद्ध था कि उधर देखते के देखते ही लोप होगया, और परहस्त संग्राम में खड़ा हुआ देख पड़ा। उस समय मेघनाथ को वहां न देखकर सब को निश्चय होगया है, कि वह भाग गया है और राक्षसों के पांव भी संग्राम से उखड़ते हुए दिखाई दिये, इस लिये यह वीर तो इनके पीछे लग रहे थे उधर मेघनाथ ने ऐसी फुरती की कि विमानारूढ़ होकर उस स्थान पर जा पहुंचा (जहां महाराज रामचन्द्र जी और लक्ष्मण जी प्रभृति वज्रदृष्टि से जो रावण का एक मुखिया सेनापति था लड़ रहे थे) और झटाझट बाण वर्षा करनी प्रारम्भ करदी यद्यपि यह दोनों भाई सुग्रीव, सुखेन, विभीषण प्रभृति बाण का उत्तर

तत्काल देरहे हैं, परन्तु वीर मेघनाथ के वाणों ने इनको चकित कर दिया है, क्योंकि शत्रु का कोई चिन्ह भी प्रतीत नहीं होता कि कहां से वार कर रहा है अन्त में बहुत सी सोच विचार के अनन्तर विभीषण ने कहा कि आप मेघनाथ की माया से बचेत रहो, यह अतीव मायावी है, इसे छल बहुत आते हैं इस से युद्ध समझ कर सावधानता से कीजिये इसमें तनिक सन्देह नहीं, कि ऐसी असाधारण शघ्रता एक मात्र मेघनाथ का क्रोध है महाराज रामचन्द्रजी ने यह सुनकर आग्नि बाण धनुष से छोड़ा, जो विद्युत के समान चमकता हुआ धनुष से निकल ऊंचे आकाश में जा प्रकाशित दिन के समान उजाला दिखला विभीषण के कथन की साक्षी देगया, परन्तु इतने में मेघनाथ ने दो †सर्प नामी बाण झटाझट निज धनुष से छोड़े यद्यपि इन वीरों ने अपनी रक्षा में किंचित त्रुटि न रक्खी; परन्तु दोनों के वक्षस्थल घायल होगये और थोड़े ही काल में वह बेसुध होगये, इनको इस दशा में देखकर सुग्रीव ने सब से पहले जो काम किया वह यह था, कि उनको विश्रामालय में लेगया विभीषण और सुखेन ने धनुषविद्या की शक्ति ऐसी प्रकट की, कि यदि मेघनाथ वहां से भाग न जाता, तो उसके प्राण बचने कठिन थे, उधर जब हमारा महावीर सेनापति और नल नील प्रभृति रावणकी सेना को परास्त करके

---

†एक प्रकार के वाण थे जिनके फण सांप के मुखके समान होते हैं ॥

वापस आए तो महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मण जी की यह दशा देख कर अतीव चिन्तातुर हुए । इस समय समस्त सरदार निरासता का पट ओढ़े चारों ओर महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मण जी के पास (जो वेसुध पड़े हैं) रुदन करते हुए बैठे हैं, और हर एक के मुख से उदासीनता टपक रही है ॥

विभीषण (घाव को ध्यान से देख कर)ईश्वर ने बड़ी कृपा की कि इन के घाव कोई ऐसे गहरे और संदेह मय नहीं हैं ।

हनुमान–महाराज ! तो इस का क्या कारण है कि यह ऐसे बेसुध पड़े हैं ?

विभीषण–"यह केवल बाणों के विष का फल है सो देखिये अभी औषधि हुई जाती है, यह कह कर अपने मंत्री से कुछ कहा जिसने तात्काल बूटी ला कर सुखेन के हाथ में दी, जो देखिये दोनों भ्राताओं के घाओं पर लगा रहा है और विभीषण इसे पानी में रोगियों के पिलानेके लिये घोल रहा है पाठकगण ! इस बूटी के प्रताप से मुर्छितों के घाव में तात्काल शान्ति आगई, थोड़ी देर में दोनों भाई उठ कर बैठ गये, और विभीषण तथा सुग्रीव की ओर निहार करयह कहने लगे "आहा विदित नहीं इस बाण में क्या जादु था कि लगते ही शरीर में अग्नि सी लगगई और वेसुधी छागई हम ने बहुतेरा अपने आप को संभाला परन्तु व्यर्थ हुआ ।

विभीषण–महाराज यह दुष्ट मेघनाथ इसी प्रकार करता है धर्म युद्ध तो यह जानता ही नहीं, जब दूसरे को

विभयी देखा छल पर कमर बांधी ॥

रामचन्द्र—अतीव शोक है, कि यह लोग बात २ में अधर्माचरण करते हैं, इनकोपरलोक काभीकुछविचारनहीं।

विभीषण—"जब मन्द भाग्य होते हैं तो बुद्धि मलीन होजाती है। धर्माधर्म का कुछ विचार नहीं रहता"। महाराज रामचन्द्र जी और लक्ष्मण जी को अरोग्यावस्था में देख सेनाध्यक्षों और सेना के शरीर में प्राण आगये और कैम्पमें हर्ष से वाद्य बजने लगे ॥

४६वां अध्याय

३य युद्ध २य दिन, वीर हनुमान और धूम्र ॥

दिन का प्रथम प्रहर समाप्त होचुका है सूर्य की तीक्ष्ण किरणें इन वीरों की खड्गों पर जो संग्राम भूमि में बड़ी निर्दयता से एक दूसरे पर वार कर रहे हैं पड़ कर भयानक दृश्य दिखला रही हैं दोनों ओर की सेनायें इस समय कुछ ऐसे जोश में हैं कि इन को शरीर की भी सुध नहीं प्रत्येक सिपाही निजकर्तव्य पालन में तत्पर हैं आरोग्य वीरों के शरीरों से पसीना पानी के समान बह रहा है और घायलों के शरीरों में रुधिर के फव्वारे उछल रहे हैं, परंतु यह लोग संग्राम कार्य में तत्पर हैं कि इन बातों की कुछ भी परवाह नहीं करते और बड़ी सावधानी से एक दूसरे पर वार कर रहे हैं। इ वीर हनुमान अपनी सेना की कमान बड़ी बुद्धिमत्ता से कर रहा

है, साहस वेग प्रवाह प्रति नाड़ी में लहरें मार रहा है, वीरता पसीने का रूप धारण किये मस्तिष्क से टपक रही है और युद्ध के विचार मनमें नाना रूप धारण कर रहे हैं, और दृष्टि बड़ी सावधानी से पहिले अपनी सेना पर पड़ती है और फिर शत्रु दल पर जाकर चारों ओर फैल जाती है ॥

पाठक महाशय ! रावण की सेना में जिसको सेना पति का पद प्राप्त है वह धूम्र है, जो देखिये निजाश्रित सेना को किस वीरता से उद्यत कर रहा है और आप भी देवान्तक और नरांतक के सहित आक्रमण कर रहा है, इस का आक्रमण देख रामचन्द्र जी की सेना में ऐसा जोश फैल गया है कि सब के मुख रक्तवर्ण हो गये हैं यह दशा देख हमारा वीर ऐसा गर्जा कि आकाश भी गूञ्ज उठा और शत्रु सेना के बड़े २ योधा तक कम्पायमान हो उठे। उधर संग्रामिक वाद्य बड़े जोर शोर से बजने लगे और देखते के देखते ऐसा घोर संग्राम होने लगा कि कभी पहिले सुनने में भी नहीं आया था, उस समय धूलि से रण क्षेत्र में ऐसा अन्धकार छागया कि मित्र शत्रु की भी पहिचान न हो सकती थी खड्ग निर्दयता से चलने लगी, शूरवीरों ने खेद से तड़प २ कर पांव भूमि पर फैलाने आरम्भ कर दिये सहस्रों तन शिर से भिन्न होकर पृथिवी पर पड़े हैं, जिस के सिर कन्दुक (गेंद) के समान इधर उधर लुढक रहे हैं। धूम्र हमारे वीर का साहस देख

इस पर आ टूटा, दोनों ने एक दूसरे पर सहस्रों खड्ग प्रहार किये, यहां तक कि दोनों के शरीर रुधिराक्रान्त हो गये, खड्ग धारा प्रहारों से मन्द पड़गई अब दोनों वीर खड्ग को त्याग गदा धारण कर युद्ध करने लगे, परन्तु जैसे धूम्र ने कूदकर गदा प्रहार करना चाहा, हनुमान जी ने निज वीरता से अपनी ढाल पर रोक लिया और घूम कर अपनी गदा का ऐसा प्रहार किया कि उसकी कटि टूट गई अस्तियें चूर चूर होगई और वेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा और ऐसा गिरा कि फिर उठने की सामर्थ्य न रही। नरान्तक और देवान्तक प्रभृति बहुत से योधा इन्द्रजानु और गवाची के हाथ से परलोक गमन कर गये, बस फिर क्या था रावणकी सेना का साहस हत होगया, भागने के सिवा कुछ वस न चला और महाराज रामचन्द्र जी की सेना प्रसन्नता से जयकारे बुलाती हुई निज कैम्प में आगई ॥

४७वां अध्याय ॥

तीसरा दिन महावीर (हनुमान) औरवज्ररुष्टकासंग्राम

सूर्यागमन सुन कर रात्रि अन्धकार संसार को शोक दृष्टि से देखती हुई कूच कर गई और शूरवीर हनुमान अंगद, गज, गवी और जामवन्त प्रभृति अपनी २ अधीन सेना को ले संग्राम भूमि में आ विराजे दूसरी ओर से वज्ररुष्ट, महापारस, महोदर, अतिवीर प्रभृति आ गर्जे, संग्राम वाद्य बजा शंख ध्वनित हुए युद्ध मंत्रों ने

भान्ति २ के उत्साह भङ्ग राग आलापने आरम्भ किये। वह खड्ग जो थोड़ी देर पहिले मियानों में छिपी हुई थीं एकाएक निकल पड़ीं, धनुष चढ़ाये गये, नेजे झुक गये वीर आगे बढ़ २ कर एक दूसरे पर वार करने लगे और बड़े वेग से संग्राम होने लगा, हमारे महावीर सेनापति की सेना पहिले से बढ़ कर जोश दिखलाने लगी, क्या सिपाही क्या अध्यक्ष सब के नेत्र वीरता और जोश से लाल होगये और रुधिर नाड़ी २ में वीरता से लहरें मारने लगा। उधर रावण की सेना यद्यपि इनसे अधिकतर जोश दिखाती और छाती ताने सामना करने को तत्पर है परन्तु इन में वह साहस, फुर्ती और सावधानी प्रतीत नहीं होती, जो एक शूरवीर में होनी उचित है वरंच इनके मन भय से दबे हुए शरीर ढीले पड़े हुए दिखलाई देते हैं, जो प्रायः तीन दिन के नित्य पराजय और वीर धूम्र की मृत्यु ने इनके साहस को घटा दिया है और वज्रदंष्ट्र इनकी यह दशा देख तत्काल घोड़े को दौड़ा कर इनके निकट पहुंचा, और ऐसा मंत्र फूंका कि इनकी खड्गें जो रुक २ कर चल रही थीं तात्काल विद्युत के समान रण भूमि में उपस्थित वीर सिपाहियों पर पड़ने लगीं क्षणमात्र में रुधिर की नदियें बहने लगीं मृतक योधाओं के शरीरों के ढेर लग गये, एक क्षण में प्रलय ने अपना रूप दिखला दिया, ओहो! वीर अङ्गद

और वज्ररुष्ट का संग्राम हो पड़ा, दूर तक दोनों परस्पर बाणों की वर्षा करते रहे यहां तक कि दोनों के शरीर छलनी से होगये, बाण समाप्त होगये तो भी इन वीरों ने साहस न छोड़ा और खड्ग निकाल लीं और एक दूसरे पर वार करने लगे वज्ररुष्ट की खड्ग की धारा कैसे चल रही है कि अंगद को इससे अतिरिक्त कि अपनी रक्षा करे उसे वार देने का समय ही नहीं देती यह समीप था कि वह बेसुध हो भूमि पर गिर पड़े कि एका एक हमारे सेनापति हनुमान जी की उधर दृष्टि जा पड़ी जो कि महापारस से संग्राम कर रहा था। इसने तात्काल एक तीर वज्ररुष्ट पर ऐसा चलाया जो उसका हृदय विदीर्ण करता हुआ छाती से पार निकल गिया और स्वयं शत्रु पर ऐसा ललकारता हुआ झपटा कि सुनने वालों के मन कांप उठे, अन्तष्करण फट गये और अचेत हो उसकी ओर देख ही रहे थे, कि हमारे महावीर ने बड़े वेग से उस पर गदा का प्रहार किया और वज्ररुष्ट जो पहिले बाण से घायल हो चुका था इस को सहार न सका और बेसुध हो घोड़े पर से गिर पड़ा वज्ररुष्ट की यह दशा देख महापारस और अति वीर क्रोध में भर गये, और घोर संग्राम होने लगा, गदाओं ने अपूर्व वेग धारण किया, बाण व खड्गों ने अनर्थ कर दिया, बाणों की वर्षा ने सूर्य्य के प्रकाश को जीत लिया,

वीर गज गवी और जामवन्त ललकार २ शत्रुओं को काटने लगे, और परहस्त तड़प २ कर माणा देने लगा। यद्यपि महापारस भी एक आश्चर्य कुलश वीर है परन्तु इस समय जो सब से बढ़कर हाथ चल रहा है वह हमारे महावीर सेनापति का है, जिसका एक भी वार खाली नहीं जाता, और जिधर कोप दृष्टि करता है समुदाय का समुदाय विनाश करता है :—

यह खग नाहु मानों, जम का स्वरूप है।
विद्युत आकाश को, विनाशरूप है॥
अत्यन्त शोक है यह जीवन की हार है।
जिधर आंख उठायें, सर्व नाश ही नाश है॥

पाठकवृन्द! रामचन्द्र जी की सेना ने ऐसा साहस और वीरता दिखलाई कि शत्रु दल को सिवा भागने के कुछ न सूझा और विजय हमारे वीर की हुई॥

अड़तालीसवां अध्याय

शूरवीर हनुमान और अनुकम्पन।

रावण ने तो समस्त रात्रि करवटें ले लेकर निकाल दी, परन्तु प्रातः होते ही अनुकम्पन और महापारस को बहुत सी सेना दे युद्ध भूमि में भेजा, उधर से गन्धमादन, सुग्रीव और शूरवीर हनुमान वीर सेना लेकर आ गर्जे, जंगी निशान काल रुप धारकर आकाश में उड़ने लगे, संग्राम वाद्य की ध्वनि गूंज २ कर वीरों का

जोश बढ़ाने लगी, जिसको सुनकर अधिक धैर्य विलम्बन की सामर्थ्य को त्याग परस्पर शत्रु दल पर जाटूटे तीक्ष्ण धारा खंगें बड़ी फुरती से चमकीं, और लाल होगईं, नेजों ने बीरों के सिरों को उछालना आरम्भ किया और निर्दय बरछियां उनकी अस्थियों को तोड़ने लगीं आहा बीर अनुकम्पन को देखिये, कैसे विचित्र कार्य्यदक्षता दिखला रहा है कि इसका प्रत्येक बाण शत्रुओं को घायल किये जाता है उधर से गन्द मादन और सुखेन और हनुमान ने भी इनकी वारों का उत्तर दे देकर इनका नाक में दम कर रक्खा है सार यह है कि यह वह समय है जब कि हर एक शूरवीर के मन में यही विचार गूंज रहा है कि जिस प्रकार हो सके आज शत्रुदमन कर प्रतिष्ठा प्राप्त करें, और वह सब इसी प्रकार में मग्न वीरता के मद में मदातुर हैं यहां तक कि किसी को निज शरीर की सुध नहीं, इनके पांव वध हुए वीरों की छातियों पर पड़ रहे हैं, और यह उनको रोधते हुए आगे बढ़ बढ़ कर खंगे का वार करते जाते हैं और इसके अनन्तर बहुत देर तक घोर संग्राम होता रहा, यहां तक कि दोनों ओर की सेना घबरा गई और सहस्रों बीर अपने संगियों के मृतक शरीरों को चकितता से देखते हुए मृत्यु शय्या पर लेट गये, और अनुकम्पन भी जो हमारे महाबीर की सेना से लड़ रहा था विजय

न पासका और एक ही तीर के प्रहार से शिर नीचे झुका भूमि पर गिर पड़ा। गन्धमादन सेनापति के हाथ से मारा गया और सुग्रीव ने उस को भी गन्धमादन के ही साथ रण भूमि में सुला कर निज जोश को ठण्डा किया॥

पाठकगण! आज की विजय का धुरन्धर हमारा वीर सेनापति हनुमान ही था। वह देखिये रावण की सेना किस विधि हार कर पीठ दिखाये जा रही है॥

४६ वां अध्याय

५म, दिवस संग्राम।

वीर हनुमान और कुम्भकर्ण॥

तीन चार दिन की निरन्तर हार और नित्य की पराजय उन शूरवीरों की मृत्यु ने जो युद्ध में मारे गये थे रावण को अतीव दुर्मन और चिंतातुर कर दिया रात्रि तो जैसे कैसे निकाली, प्रातःकाल होते ही कुंभकरण को बुलाकर कहने लगाः—

क्षमा करना—आप के विश्राम में बाधा डाली है कुसमय आने की तकलीफ दी। परन्तु क्या करूं बेवश हूं। तुम्हारे सिवाये कोई दूसरा दिखाई नहीं देता जो रामचन्द्र और वानरी सेना के सन्मुख जा सके। हां! बड़े २ शूरवीर जिनके आश्रय यह राजधानी सुप्रसिद्ध थी युद्ध में परलोक गमन कर चुके हैं सहस्रों वीर प्राण दे चुके हैं कोश खाली दीख पड़ता है और कार्य साफ-

रूपता की कोई भी आशा नहीं प्रतीत होती" ॥

कुंभकरण—'यह समय चिंतासागर में डूबने का नहीं वरंच वीरता और साहस से काम लेने का है। अग्नि की वह चिङ्गारी जो चिरकाल से शांति रूप भण्डार में पड़ी हुई सुलग रही थी एक दिन तो भड़कनी ही थी। यदि इस समय ऐसा आतुर और चिंतातुर होना था तो यह पहिले विचारना था' अपने मंत्री तथा बंधू वर्ग के कथन पर आचरण करना था। खेद तो यह है कि उस समय हम लोगों ने बहुतेरा समझाया अनेक यत्न किये परंतु आपने एक न मानी केवल हमारा समझाना ही नहीं वरंच खर और दूषण की सहस्रों राक्षसों सहित मृत्यु राम लक्ष्मण की वीरता का चित्र तुम को दिखला चुकी थी, तथापि हम लोगों की प्रार्थनाओं पर किंचित ध्यान देने के स्थान इस विपरीतता चरण पर तुम दृढ़ प्रतिज्ञा होगये, यहां तक कि साधू प्रकृति विभीषण को इसी बात से घर घाट छोड़ना पड़ा सोये हुये सिंह को जगाना और फिर सुख मय शान्ति चाहना असम्भव है ॥

ग्रन्थ कर्त्ता—जैसी करनी वैसी भरनी ॥

राजन्! "यद्यपि वह समय तो हाथ से जाता रहा है और सहस्रों वीर मारे जाचुके हैं परन्तु अब भी उन के क्रोध को शांति करने का यदि कोई उपाय है तो वह यह है कि आप सीता महारानी को साथ लेकर श्री राम-

चन्द्र जी से अपने कुकर्म्मों की क्षमा प्रार्थना कीजिये आप लंका की दशा पर ध्यान दें और अपना वंश विनाश न होने दें" ॥

रावण—(क्रोध में आकर) "बस, जी बस, मैं इस से अधिक श्रवण की सामर्थ्य नहीं रखता, मैं दुधाधारी बालक नहीं हूं मैं अपनी प्रतिज्ञा पर वैसे ही दृढ़ हूं जैसे कि पहिले था और आगे भी रहूंगा। कुछ चिन्ता नहीं यदि तुम लोग राम चन्द्र से डर कर संग्राम से भागते हो तो मैं अकेला ही अपने वीरों का बदला लेने को बहुत हूं" यह कह और नीचे सिर झुका कर कुछ सोचने लगा ॥

उधर कुम्भकरण मन ही मन में यह कह रहा था, "हा मैंने बहुतेरा चाहा, या यत्सामर्थ्य यत्न किया कि किसी प्रकार यह आपत्ति टल जाये सर्व साधारण का वध और वंश विनाश न हो परन्तु खेद! कि दैव की यही इच्छा है, कि पुलस्त मुनि का वंश अब देर तक पृथिवि पर न रहे, इतने में रावण ने एक वेर कुम्भकरण की ओर देखा, और ठण्डी सांस भर कर फिर सिर झुका लिया, रावण की यह दशा देखते ही कुम्भ करण को भ्रातृभाव ने आकर्षित किया और कहने लगा ॥

"राजन्! मेरा यह अभिप्राय कदापि नहीं था कि आप को कलपाऊं और दुखित करूं यह कभी न समझें कि मैं सग्राम से डरकर पीछे हटता हूं नहीं! नहीं! नहीं

मैं आप का सच्चा हितैषी और आज्ञाकारी भ्राता हूं जब लग मेरे शरीर में प्राण हैं आप किसी बात का विचार न करें, यदि तारामण्डल भूमि पर और भूमि तारामण्डल के स्थल चला जावे तो असम्भव है परन्तु मेरे जीते जी आप पर कोई क्रूर दृष्टि करे यह असंभव नहीं:—

कुम्भकरण का वाक्य सुन कर मंत्रियों में से एक ने कहा

महा प्रतापी तुम दशकंधर, तुम समान नहिं कोई धुरन्धर ।
शङ्का करो नेक नाहिं मन में, संहारो वैरी को रण में ।
राम लक्ष्मण अरु हनुमाना, कुम के आगे कीट समाना ।
कहे दास मन शङ्का कीजे, केवल युद्ध माहिं चित दीजे ॥

रावण ने प्रसन्न होकर कुंभकरण को गले से लगा लिया और कहने लगा । निस्संदेह आप ऐसे ही वीर हैं मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारे होते हुये मुझे किसी वीर का भय नहीं । रामचंद्र का पराजय करना और वानर देश वासियों को विजय करना जिस के भाग्य में लिखा है वह तुम ही हो । लाखों वीर सहस्रों योधा केवल प्रतिज्ञा कर रहे हैं, जाओ शीघ्र जाकर उन का पराजय से मिलाप करादो" ॥

उधर जब ही गुप्तचरों ने रामचंद्र जी को विदित किया कि कुंभकरण आज बड़े वेग से बड़े २ योधाओं को संग ले युद्ध की तैयारी कर रहा है तब उन्हों ने तात्काल विभीषण तथा अन्य अधिकारियों से सम्मति की और

स्वयं*रणवेष्टन और शस्त्र धारण कर हनुमान, सुग्रीव, सुखेन, नल, नील और जामवन्त को साथ ले लाल ध्वजा झुलाते हुये रणभूमि में आ विराजे ॥

आहा ! इस समय रामचंद्र जी का दृश्य देखने के योग्य है आगे २ असंख्य पैदल सेना है और उस के पीछे सवार और रथ हैं, प्रत्येक सेना पति की भिन्न २ पताका वायु में झूम रही है और युद्ध बाजों से प्राचीन काल के वीरों के उत्साह वर्द्धक राग निकल रहे हैं और वह वीरता के मद से उन्मादितों के समान झूमते हुये जारहे हैं, जिन को देख कर अचेत कहना पड़ता है कि आज महा संग्राम होगा, जब ही रण भूमि के निकट पहुंचे हमारा वीर घोड़ा दौड़ाता हुआ आगे बढ़ा और उच्च स्वर से कुछ कहा जिस को सुनते ही वीरों के धनुष खिच गये और अपने २ स्थान पर खड़े हो युद्ध काल की प्रतीक्षा करने लगे, इतने मे कुम्भकरण युद्ध वेष्टन पहिरे

* रणवेष्टन और अन्य युद्ध सामग्री राजा वरुण ने राजा रामचंद्र जी को भेटा की थी (देखो महाभारत वन पर्व फैज़ी कृत अनुवाद यह जो प्रायः कथन है और राम लीलाओं में भी देखा जाता है कि युद्ध के समय रामचन्द्र जी और लक्ष्मण जी को हनुमान कन्धे पर उठाते हैं यह नितान्त भूल है, वाल्मीकी रामायण के पाठ से स्पष्ट पाया जाता है कि वह रथों पर सवार होते थे प्राचीन काल में गज अश्व आदि के आतिरिक्त एक ऐसा यान था जो युद्ध के समय बहुत काम आता था और युद्धों में प्रायः इन्हीं पर आरुढ़ होकर युद्ध करते थे, [देखो वाल्मीक रामायण पृ० १२६ सर्ग १०८] ॥

मस्त हाथी पर चढ़ सहस्रशः वीरों के साथ रणभूमि में आ पहुंचा और हाथी से उतर कर वायुवेग गामी घोड़ों के रथ पर जिस को आज कल के 'वैलरों' की उपमा दी जावे तो अत्युक्त नहीं। आरूढ़ हुआ और रथ को आगे बढ़ा ही रहा था कि दोनों ओर शंख ध्वनि हुई और युद्ध वाद्य की गर्ज से रणभूमि गूंज उठी घोड़े भी चौकन्ने होगये और घोर संग्राम आरम्भ होगया। कुम्भकरण के सामने में महाराज रामचंद्र जी की ओर से जिस वीर को नव शत्रु से सामने की प्रतिष्ठा प्राप्त हुई वह वही हमारा महावीर सेना पति है। जो देखिये महाराजा रामचंद्र जी के चरणों में प्रणाम कर सुखेन, नल और नील से कह रहा है कि' यावत्सामर्थ्य आप लोग महाराजा राम चंद्र जी और लक्ष्मण जी की रक्षा में तत्पर रहें इन्हीं की रक्षा और खबरदारी को अपना मुख्य उद्देश्य समझें ऐसा न हो कि शत्रु छल से इन को किसी तरह का क्लेश दें। हमारी समस्त आशायें इन्हीं पर निर्भर हैं' इतना कह कर छाती ताने धनुष खैंच घोड़े को चक्कर देता हुआ कुम्भकरण के समीप जाकर उच्च स्वर से बोला॥

'सावधान सम्भल जा इन दीन सिपाहियों से क्यों अप्रतिष्ठित होरहा है' इतना कह कर एक बाण अपने धनुष से छोड़ा जिस को उस ने अपने बाण से काट दिया और अतीव क्रोध में आकर हनुमान पर बाणों की वर्षा

करने लगा. जिनका उत्तर हमारा महावीर देखिये तात्काल देरहा है, इस प्रकार देर तक दोनों का संग्राम होता रहा, हमारे वीर हनुमानजी की वीरता से कुम्भकरण क्रोध से जल गया, और अजगर के समान मुख से क्रोध के चिनगारे उड़ाता हुआ वार करने लगा। आहा! इतने बाण बरसे कि दोनों वीरों के शरीर छलनी से होगये देह से रुधिर प्रवाह करने लगा; यद्यपि हमारा वीर इस समय सिख नख घायल होचुका है परन्तु इस वीरता से वार पर वार कर रहा है और बड़े २ ऐसे वाक्य ऊंची स्वर से कहता है कि सुनने वालों के मन कांप जाते हैं आहा घोड़े को तो देखिये कैसी फुरती से चक्कर लगा रहा है, जिस से शत्रु का लक्ष अपने मालक को बनने ही नहीं देता, यह अचम्भा देख कर महापारस और अतिवीर प्रभृति योधा सब इसी ओर झुक पड़े, प्रकट रूप में इन सब ने हमारे वीर को घेर लिया है परन्तु उस की ओर देखिये कैसी सावधानी और शीघ्रता से अपनी रक्षा करता हुआ शत्रु पर वार कर रहा है और अश्व की तेजी भी इस समय श्लाघनीय है जूं ही हनुमान महा पारस पर आक्रमण कर अपना मार्ग निकालने लगा कुम्भकरण ने बड़े क्रोध के साथ धनुष बाण छोड़ा जो इस के युद्धवेष्टन को चीरता हुआ पहलू को जखमी कर निकल गया, परन्तु घोड़े ने इस समय वह चालाकी

दिखलाई कि शत्रु दल में से जो आगे आया सब को रोंधता हुआ अपनी सेना में आ निकला, इस को जाते देख कर रावण की सेना ने जयकारे प्रसनन्ता द्योतक बुलाये, मानों यह समझे कि वह हार कर भाग गया है, इधर सुखेन ने तात्काल पूर्वक करन बूटी घाव पर लगा कुछ काल विश्राम करने को कहा और सुग्रीव कुम्भकरण से संग्राम करने लगा, यद्यपि सुखेन और उस की अधीन सेना सीमा से अधिक साहस दिखला रही है परन्तु शत्रु को निहारे किस विध बाण चला रहा है और जब यह लोग उस पर आक्रमण करते हैं, तो रथ को ऐसा चक्कर दे जाता है कि धूल के सिवा कुछ दीख ही नहीं पड़ता और थोड़ी देर में फिर वहीं आ उपस्थित होता है, इस का एक २ बाण पांच २ दस २ वीरों को यमपुरी का सन्देशा पहुंचाता है, वह देखिये कैसी दीनता से देखते हुये वीर भूमि पर तड़प रहे हैं, जैसे कि सुग्रीव, अंगद, जामवन्त प्रभृति ने क्रोध में आकर आक्रमण किया, सहस्रों राक्षसों का वध होगया, कई घायल हो पावों के नीचे मथे गये कुम्भकरण और सुग्रीव का परस्पर सामना होगया, देर तक आपस में वार करते रहे, अन्त में सुग्रीव के सिर पर एक गदा ऐसी वेग से लगी कि दीन बेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा और कुंभकरण ने शीघ्रता से उसे रण-भूमि से उठा लिया, पहिले सुग्रीव को शत्रु के हाथ में

आये देख कर जामवन्त अंगद प्रभृति का साहस टूट गया उधर रावण की सेना ने प्रसन्नता से "रावण की जय की ध्वनि मचादी, परन्तु जब ही यह शब्द हमारे वीर के कानों में पड़ा और सुग्रीव को शत्रु के काबू में सुना तात्काल अश्वारूढ़ हो शत्रु पर आक्रमण करता हुआ ललकार कर बोला" छल से वार करना और एक बेसुध वीर को उठा लेजाना वीरता नहीं है, वीर संग्राम में ऐसा नहीं किया करते यदि मैं ऐसा करना चाहता तो तुमको कभी का परलोक गमन करा देता परन्तु मैं ऐसा करना अधर्म और युद्ध नियमों के विपरीत समझता हूं॥

कुम्भकरण—क्यों इतना मिथ्या भाषण और आत्मा श्लाघा से अपना मन प्रसन्न करता है, तुम सब में मुझे मारने या पकड़ने वाला कोई भी जान नहीं पढ़ता है कि तु अपने जीवन को नहीं चाहता या तू उस वीरता का घमण्ड करता है जो मेरी अनुपस्थिति में कर गया था, परन्तु स्मरण रख कि तू मेरा सामना करने की शक्ति नहीं रखता॥

हनुमान—"मैं तुम लोगों को भली भान्ति जानता हूं और तुम्हारे साहसों को भी जान चुका हूं, तुम्हारे वंश की जो सामर्थ्य है वह महाराज वरुण के युद्ध में भली भान्त देख चुका हूं तनिक विचार और देख कि मैं कौन हूं॥

यह कहा और दोनों एक दूसरे पर टूट पड़े और

परस्पर ऐसा पराक्रम दिखलाया कि जिसे देख कर बड़े २ वीरताभिमानियों के छक्के छूट गये, और किसी को पास आने की हिम्मत न पड़ी, वीर सेनापति को देखिये, कैसी वीरता से छाती ताने कुम्भ करण को उत्तर प्रत्युत्तर दे रहा है, जो तीर शत्रु इस पर मारता है उसे अपने तीर से काट देता है, या ढाल पर रोक लेता है अन्त में उस वीर ने केसरी सिंह के समान धावा किया, और उसे पराजित होता देख महापारस आते वीर और निकुम्भ प्रभृति इसी ओर झुक पड़े उधर से महाराजा रामचन्द्र जी लक्ष्मण जी, अगंद, नल, नील भी सहायतार्थ आ पहुंचे रथों और घोड़ों की हलचल से भूमि कम्प होने लगा खड्ग पर खड्ग नेजे पर नेजे तीर पर तीर और गदा पर गदा पड़ने लगी, यह समस्त शस्त्र चुम्बक पत्थर से बन गये, जिन में से अग्नि के चिनगारे उड़ २ कर आकाश को जा रहे हैं, जो सिपाही साहस और वीरता में अद्वितीय हैं, वह तो प्राणों की परवाह न करते हुये आगे बढ़ जाते हैं और एक ही चोट से शत्रु विनाश करते हैं परंतु दुर्बल मन से भीरू भागने का मार्ग ढूंढ रहे हैं और इस बात की खोज में हैं कि कहीं चूहे का ही बिल मिले तो उस में ही घुस जावें। सार यह है कि हमारे महावीर की आधीन सेना ने दिल खोल कर हाथ दिखाये और वीर लक्ष्मण जी तथा अंगद ने शत्रु का

बाणों से नाक में दम कर दिया और एक दूसरे पर सवार पैदल गिरने लगे मुरदों के ढेर लग गये ॥

पाठकगण ! अपनी सेना को पराजित होते देख कर कुम्भकरण ने बड़े क्रोध में आ ज़ोर से शंख बजाया और समस्त सेना को एकाएक धावा करने की आज्ञा दी ॥

कुम्भकरण जोश में आकर लक्ष्मण जी पर टूट पड़ा परन्तु महाराज रामचन्द्र जी ने उस राक्षस के दमन करने के लिये धनुष में तीक्षण बाण छोड़ जो उसकी संग्राम वेष्टन और छाती को वेध कर पार निकल गया, और कुम्भकरण बेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा ॥

कुम्भकरण परलोक को, यात्रि भयो तत्काल ।
नाशरूप संसार में, बचा कौन सब काल ॥

कुम्भकरण को मृत्यु शय्या पर लेटा देख कर शत्रु दल में हाहाकार मच गया युद्ध बन्द होगया और शेष बची हुई शत्रु सेना अतीव निराश हो रावण के पास चली गई ॥

५०वां अध्याय

छठे दिन का युद्ध

वीर लक्ष्मण और मेघनाथ

आज रावण की सेना असाधारण रीति से वीरता प्रकाश कर रही है बड़े २ वीर युद्ध के लिये उद्यत हैं इनका संकेत के द्वारा वार्तालाप करना और परस्पर साहस बढ़ाने के लिये मुसकराना हमारी चाकितिता को और भी बढ़ा

रहा है, कहां इनका वार बार की पराजयता से चिन्तातुर होना राज्य विनाश की सम्भावना और कहां इस समय इस प्रकार हास्य करना इस में अवश्य कुछ भेद प्रतीत होता है ॥

पाठकगण ! इनके बढ़े हुए साहस को देख हम से भी रहा नहीं गया, और हाल जानने के लिये अपने विचार की बाग को उधर लेजाना पड़ा, सुनिये कम्पन परजंग से क्या कह रहा है ॥

कम्पन—"परजंग ! जहां तक सम्भव हो शत्रुओं को सोच विचार करने का अवसर ही न दिया जावे ऐसा न हो कि वह हमारे भेद को जानकर कृतकार्यता में विध्नकारक हों ॥

कम्पन (प्रसन्न होकर) हां हां निःसन्देह ऐसा ही होना चाहिये क्योंकि महाराज के सामने हमारे कुंवर(मेघनाथ) प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि उनका फ़ैसला कर दूंगा। इस लिये हमें भी यही उचित है कि अपनी ओर से किञ्चित त्रुटि न करें वरंच यथाशक्य प्रतिज्ञा पालन में साहायता दें ॥

परजङ्ग—(कुछ धीरे से कह कर)ए क्या ? इस में कुछ हानि है ॥

कम्पन—हां हानि का क्या कथन ! परम हानि ही नहीं वरंच अपने अकृतकार्य होने का पूर्ण विश्वास है, और व्यर्थ लज्जातुर होने का भय है ! क्योंकि राम लक्ष्मण धनुष विद्या में ऐसे परम निपुण हैं कि आज समस्त पृथ्वी

पर उन के तुल्य कोई नहीं और हनुमान ऐसा चतुर सेना पति है कि उस से विपरीत कामना पूर्ण करनी अतीव कठिन वरंच असंभव है" ॥

परजंग–अच्छा जब वह सामने ही न होंगे तो कृत कार्य्य कैसे होसकते हैं?

बरजंग–(कान में कुछ कह कर) बस एक २ बाण सब के लिये बहुत है । आनंद ! आप इन बातों का किंचित विचार न करें, जहां तक होसके ऐसा युद्ध करने का यत्न करो कि शत्रु को शरीर तक की सुध न रहे फिर देखना हम कैसे कार्य साफल्य करते हैं ॥

परजंग–(प्रसन्नता से) बहुत अच्छा मेरी ओर से निश्चित रहें, यह कह कर अपनी अधीन सेना मे जो इतने काल में कुछ आगे बढ़ गई थी, जा मिला उधर से सेना पति दुवइ, मयन्द गज, जामवन्त, नल, सुग्रीव, अंगद और हमारा बीर हनुमान सेनापति असंख्य सेना सहित आपहुंचा और दोनों सेना आमने सामने खड़ी होगई । आहा ! इस समय के दृश्य को देख स्वयं कहना पड़ता है कि आज अवश्य अनर्थ होगा । सहस्रों जीवों का वध हो जायगा जहां तक देखन में आता है जगी सेना ही सेना दिखाई देती है और दोनो ओर के बीर सिपाही कमान चढ़ाये धनुष टंकारे आज्ञा की परतीक्षा में हैं । जू ही युद्ध वाद्य बजा । शंखों ने गर्ज कर युद्ध की आज्ञा दी, धनुष के

खैंचने का शब्द आने लगा, तीर जो अभी चिल्लों में पड़े अपने रुधिराक्रान्त जिन्हा को छिपाये हुये थे बीर योधाओं के शरीरों में धस गये, कई तो मांस को काटते और अस्तियों को विदीर्ण करते हुये कटि से पार होगये। क्षण भर में रंगभूमि ने भयानक रूप धारण कर लिया वीरों ने शूरवीरता के प्रमाण देने आरम्भ किये, देर तक धनुष युद्ध परस्पर होता रहा, एकाएक राक्षसी सेना ने आक्रमण किया और दोनों ओर ऐसा घमसान मचा कि अपने पराये की सुध भी न रही नेजे बरछियों और खड़गों के प्रहारों ने कई सिर धड़ से भिन्न कर दिये और वीरों का अमूल्य रुधिर पानी के समान प्रवाहित होगया ॥

उभय परस्पर सेन में, युद्ध भई अति घोर ।
क्षण भीतर संग्राम में, रक्त बहा चहुं ओर ।
शस्त्रऽस्त्र के शब्द से, सब सुध दई भुलाय ।
सुखरामदास लाखों सुभट रण में दिये लिटाये ॥
महा भयानक युद्ध यह रहा बहुत ही काल ।
धनुष गदा अरु खग ने, किये हनन विकराल ॥

तनक हमारे वीर की खड़ग को देखिये, कैसी शीघ्रता से चल रही है, कि शत्रु को वार करने का अवसर ही नहीं देती और न ही वह अभागे अपनी रक्षा ही कर सके हैं उधर अंगद प्रभृति वीरता प्रकट कर रहे हैं, सहस्रों के प्राण निकल गये, असंख्य राक्षस और सहस्रों वीर

अध्यक्ष भूमि पर बेसुध हो गिर पड़े, राक्षसी सेना भागने को उद्यत थी और मार खाकर पराजित होना चाहती थी कि एकाएक रक्ताक्रान्त वाणों की वर्षा होनी आरम्भ हो गई। हा! हा! जिसको तनिक वाण छू भी गया भूमि पर गिर परलोक यात्रा कर गया, यह लो! देखना नल जामवन्त प्रभृति अचेत भूमि पर पड़े हैं, इनको इस दशा में देख हमारा वीर सुग्रीव के पास गया, परन्तु वह अभी इसे देखही रहा था कि एक वाण रणभूमि से होता हुआ उसके पांव पर लगा, और किञ्चित काल में यह भी बेसुध हो अग्रगामी मित्रों का साथी बना, इन सब की यह दशा देख शूरवीर लक्ष्मण जी केसरी सिंह के समान गर्जते हुए वहां आ पहुंचे, और ऐसी महान शक्ति दिखलाई कि राक्षसी सेना सामना करने की सामर्थ्य न लाकर भागने को उद्यत होगई और वीर लक्ष्मण जी विजय पताका झुलाते हुए बाहर आए कि एक वाण * उनके

---

* जिस का फल बरछी के फल के समान है।

प्राचीन काल भारत में युद्धास्त्र नाना भान्ति के होते थे कई कर्त्ताओं के नाम से प्रसिद्ध थे जसे कि इन्द्रवाण, ब्रह्मास्त्र प्रभृति प्रायः ब्रह्मास्त्र एक ऐसा वाण था कि उस मे विष खुशक दिया जाता था और उस के लगने से जीवन की आशा छूट जाती थी सुना गया है कि आज कल की पूर्वी अफरीका में जगलों (वाने) लोग इसी प्रकार के वाणों से काम लेते हे और कई शस्त्रों के मुख जिसवस्तु से मिलते थे उस के नाम से प्रसिद्ध थे, जैसे हल, मुग्दर, प्रग्रह आदि

युद्धवेष्टन को वेधन कर वक्षस्थल में आघसा और पार निकलगया, महाराज रामचन्द्रजीने (जिनका रथवाही देखिये रथ को कैसे उड़ाए आरहा है) ज्यूंही ऊपर दृष्टि की और मेघनाथ को देखा कि विमानारूढ़ हो वार कर रहा है, आप ने तत्काल निज धनुष से आग्नेयबाण चलाये, और इसी प्रकार एकाएक तीन चार बाण चलाये

इसी प्रकार इंगलिस्तान में भी १म, एडवर्ड के समय में भी एक युद्धास्त्र था जिस का नाम युद्ध का भेड़िया था और ३य, एडवर्ड के राज्य में " बिल्ली का घर" और आरा था जो डैमज के युद्ध में वरते गये थे ॥

कई रामायण कर्त्ता लिखते हैं कि लक्ष्मण जी की शक्ति (विषाक्रांतबाण) के लगने के समय हनुमान वहां विद्यमान न था वह उस समय नारद जी से महाराजा रामचद्र जी की श्लाघा के राग सुन रहा था यद्यपि उन का यह लेख हमारे वीर रत्नकी प्रतिष्ठा और रामचंद्र जी के चरणों में पूर्ण भक्ति प्रकट करता है, क्योंकि वह लिखते हैं कि हनुमान जी की उपस्थिति में मेघनाथ कुछ भी नही कर सकता था परंतू पाठक महाशय ! यह व्यवस्था एक प्रकार से उन की महत्वता प्रकट नहीं करती वरच उन के जीवन में कलंक रुप है, कि ऐसे महा संग्राम के समय एक वीर सेनापति का और वह भी कौन सा जिस पर युद्ध का सब से अधिक भार हो रणभूमि से मुख मोड़ रंग भूमि में जा लगे और रणभूमि की कुछ भी सुध न रहे थोड़ी सी बात नही, इस से यह परिणाम मिलता है कि हनुमान युद्ध नियमों से अनभिज्ञ और रण छोड़ थे, परंतू प्रसन्नता का विषय है कि वाल्मीकी रामायण में हम इस लेख को नहीं देखते ! (देखो वाल्मीकी रामायण लंका कांड पृ०६२,६३) ॥

परन्तु मेघनाथ की फुर्ती को देखिये, कि यह अपना विमान किस वेग से लिये जाता है कि कठिनता से कभी २ दृष्टि गोचर होता है और इस लिये अब तक महाराजा रामचन्द्र जी का शत्रु विघातक बाणों से बचा है, अन्यथा चिरकाल का भूमि पर लेटा हुआ देखने में आता, मेघनाथ का विमान जब लग रंगभूमि के ऊपर चक्कर बांधे चलता रहा उन्होंने भी उस का पीछा न छोड़ा, परन्तु जब सीमा से अधिक उस का पीछा किया तो लुप्त होगया और रावण की शेष सेना प्रसन्नता के ढोल बजाती हुई रावण के निकट जापहुंची उधर महाराज रामचन्द्र जी ने शत्रु का नाम भी न देखा तो लक्ष्मण जी के पास (जो उस समय बेसुध होकर गिर पड़ा था) आए और लक्ष्मण जी को रुधिरक्रान्त तथा कथनशक्ति विहीन देखा और चकित से होमनमें कहने लगे॥

भावी अटल प्रबल है, धारे रूप बहु रूप ।
क्षण पल में वह औरही, कर देवे स्वरूप ॥

इतने में सुखेन गवाच प्रभृति भी आपहुंचे और उन वीरों को जो बेसुध पड़े थे ध्यान पूर्वक देखा, लक्ष्मण जी के अतिरिक्त सब घायल हुये योधाओं के घाओं पर जिन के घाव नाममात्र थे और विष के कारण बेसुध पड़े थे सुवर्ण कर्णी बूटी लगाई जिस के लगते ही सब वीरों ने सुध संभाल ली, हा ! खेद ! लक्ष्मण जी का घाव इतना गहरा था कि दो तीन प्रकार की बूटियें जो वहां विद्य-

मान थीं क्रमशः लगाई गईं परन्तु उन्हों ने अपना तनिक भी फल न दिखलाया और घाव जनित व्याधि बढ़ती गई, अर्थात् जैसे २ औषधि लगाई घाव बढ़ता गया अन्त में उन को उठा कर कैंप में लेआये ॥

५१वां, अध्याय ।

संजीवनी बूटी ॥

संसार का क्या भरोसा है इस से शिक्षा लेनी चाहिये।

पाठकगण ! संसार शिक्षागार है इस में अहंकार करना किसी को उचित नहीं मनुष्य कुछ सोचता है भाग्य में कुछ होता है आहा ! यह वही लक्ष्मण जी हैं जो कुछ काल पूर्व केसरी सिंह के समान गर्जते हुये रण भूमि में शत्रु दलन कर रहे थे और अब अचेत हाथ पांव फैलाये रुधिराक्रान्त भूमि पर लेटे हैं । इन की एक ओर तो सुखेन सुग्रीव, हनुमान प्रभृति और २य, ओर महाराज रामचन्द्र जी सिर झुकाये बैठे हैं, इन वीरों के क्लेश और चिंता का अनुमान कौन कर सकता है, जिव्हा को सामर्थ्य नहीं कि वर्णन करे और लेखनी में शक्ति नहीं कि लिख सके ।

लक्ष्मण जी की भोली भाली मूर्ति उन का मधुर भाषण आज्ञानुयायी स्वभाव, देश त्याग, बनवास आगमन के लिये उद्यत हो अपने सुखों को ज्येष्ठ भ्राता के लिये न्योछावर करना आदि सब बातें रामचन्द्र जी के हृदय में रूप धारण कर आगई और वेवस हो हृदय कांप

उठा, मन घबरा गया और नेत्रों से जल धारा बह निकली, यह दशा देख सुखेन ने जो सन्मुख ही बैठा था कहा :—

इस में संदेह नहीं कि भ्राता भुजाबल आपत्ति काल के सहायक और कठिनता के समय आश्रय रूप होते हैं, लक्ष्मण जी की व्याधि पर जितना शोक करें योग्य है, परन्तु भावी प्रबल है इस के आगे कुछ पेश नहीं जाती हां पुरुषार्थ करना मनुष्य का धर्म है, देवासुर संग्राम में दो चार नहीं दस नहीं वरंच सैंकड़ा वीर इन अत्याचारियों के हाथों से इसी प्रकार छल में आकर घायल हुये थे, परन्तु अमृत संजीवनी के सेवन से तात्काल अरोग्य होगये * हां खेद वह औषधि इस समय विद्यमान नहीं और हम उस वन से जो गन्धमादन पर्वत पर विद्यामान है, बहुत दूर हैं, अन्यथा लक्ष्मण जी का घाव तो कुछ वस्तु नहीं यदि समस्त शरीर भी गल गया हो तो भी अरोग्य होना कठिन नहीं था ॥

* देखो प्लोड आफदी ईस्ट पृ० २८७ जो अनुमान ७०० मील की दूरी पर है॥

पाठकगण! हमारा यह लेख कि हनुमान जी अमृत संजीवनी दूनागिर पर्वत से नहीं लाये और न ही भरत जी से मिले हैं क्या जाने आप लोगों को अनुचित प्रतीत हो कि हमने तुलसी रामायण का खण्डन किया है परन्तू आप यह बात हृदय में धार लें कि उन्हों ने जो कुछ लिखा है भक्तिभाव या महाराज रामचन्द्रजी की सच्ची प्रीति के कारण लिखा है एतिहासिक रीति पर नहीं परन्तू हमने एतिहासिक वृत्तांत लिखने में युक्ति और प्रमाण से

रामचन्द्र—फिर अब क्या कर्तव्य है ?

सुखेन-अमृत संजीवनी की प्राप्ति के सिवा कोई अन्य औषधि प्रतीत नहीं होती और वह सूर्यास्त से पूर्व आनी चाहिये अन्यथा फिर खेद और चिन्ता के सिवा कुछ न बन पड़ेगा ॥

रामचन्द्र—(हनुमान जी की ओर देख कर) मेरे वीर सेना

काम लेना है इस लिये जब हम सब से पूर्व वाल्मीकी रामायण लंकाकांड की ६३ वे पृष्ठ० देखते हैं तो इस बात का कहीं भी पता नहीं मिलता और न ही अंगरेजी इतिहास कर्ता मिस्टर रिचडसन साहिब जिन्हों ने अतीव यत्न से बड़े२सुयोग्य विद्वानों की सहायता से बालमीकी रामायण का अनुवाद अंगरेजी में किया इस की साक्षी देते हैं अब हम देखते हैं कि दूनागिर जो हिमालय पर है लंका से कितनी दूरी पर है, आधुनिक भूचित्रों से पाया जाता है कि यह अन्तर दो हजार मील से भी अधिक है जो आवागमन की रीति से साढ़े चार हजार मील के लगभग होता है इतनी बड़ी भारी यात्रा के लिये विमानों के सिवा और कहीं कोई साधन वर्णित नहीं है, जिन की गति हमारे ऋषियों ने अधिक से अधिक १३० मील प्रति घंटा के हिसाब लिखी है, अब देखना यह कि इस कार्य की सिद्धि के लिये हनुमान जी को कितना अवसर मिला, क्योंकि लंका में दिनमान रात्रिमान के तुल्य होता है इस लिये आधा घंटा अन्तिम दिन का और १२ घंटे रात्रि के लेते हैं तो केवल १२ घंटे और ३० मिण्ट होते हैं । इन में से आधा घण्टा औषधि की तलाश का और दो घण्टा शेष रात्रि के जब कि हनुमान जी वापस आ पहुंचे निकालने से केवल १० घण्टे बचते हैं जिन को ४५०० सौ मील पर बांटते हैं तो विभक्तप्रति घंटा ४५० मील आते हैं इस लिये पाठक महाशय स्वयं विचार लें कि वह ऐसे

पति आप के सिवा कोई नहीं दीखता जो इस कठिन कार्य को पूर्ण कर सके, लक्ष्मण जी का जीवन तुम्हारे हाथ है ॥

हनुमान (हाथ बांध कर) "महाराज आप धैर्य धारें,

कौन से साधन थे जिनसे हनुमान जी ने यह यात्रा किया, जहां तक विचार काम करता है विमानों के अतिरिक्त कोई साधन नहीं मिलता, जिनकी गति का वर्णन ऊपर लिख आये हैं यदि कोई और साधन मान भी लिया जावे तो बुद्धि नहीं मानती कि ऐसी तीव्रगति यान में मनुष्य जीवत रह सके, २य महाराज रामचन्द्र जी की आपत्ति का वर्णन और रुधिर प्रवाहिक संग्राम सुन कर भरत जी का मौन साधन किये रहना मानने के योग्य नहीं, क्योंकि रामचन्द्र जी के वियोग में राज्य सिंहासन को त्याग साधू रूप में निर्वाह करने के लिये १४ वर्ष की प्रतिज्ञा करने वाला भ्राता ऐसे कठिन समय पर सहायक न होना कब स्वीकार कर सकता था पाठकगण! क्या आप मान सकते हैं कि भरत जी ने ऐसा किया हो क्या उन का जीवन वृत्तांत और महाराज रामचन्द्र जी का वर्ताव इन सब की साक्षी देता है कि भरत जी अकृतज्ञ और अनाज्ञाकारी थे? नहीं कदापि नहीं? वह महाराज रामचन्द्र जीके पूर्व हितैषी सहायक और आज्ञाकारी भ्राता थे तनिक रामायण के अयोध्या कांड को पढ़िये और देखिये कि भरत जी किस स्वभाव और किस विचार के पुरुष थे वह केवल हमारी अल्पज्ञता का फल है कि हम ऐसे महा पुरुष के जीवन को कलंकित करते हैं कि यह कदापि सम्भव न था कि वह इस दशा को सुनते और वहां न आते उपरोक्त समाचार को विचारने से अवश्य कहना पड़ता है कि हनुमान द्रूनागिर पर्वत पर नहीं वरन् गन्धमादन या कंचनगिर जो हिमवान पर्वत के किसी विभाग का नाम था। देखो वाल्मीकी रामायण लंका कांड पृ० २६२ अंगरेजी रामायण मिस्टर आरग्रिफथस साहिब कृत पृ० ६३ १म पुस्तक ॥ (१) देखो—वल्ड आफ दी ईस्ट सफा २३७॥

जहां तक सम्भव होगा यत्न करूंगा, (पश्चिम की ओर देख कर) सूर्य अस्त होना चाहता है आज्ञा दीजिये" ॥

रामचन्द्र—"शाबाश वीर ! तुम से ऐसी ही आशा थी, (सुखेन की ओर निहार कर) वीर सेना पति को सब अवस्था समझा दीजिये" ॥

सुखेन—"अमृत संजीवनी का पौदा पीतवर्ण होता है फल हरित फूल तनिक सुनहरी रंग और उस में से जंगली चन्दन की गन्ध आती है भूमि पर ऐसा विस्तृत होता है कि भूमि दृष्टि ही नहीं आती। इन बातों को भली भांति स्मरण रखना, परन्तु इतना सोच लेना कि यह कार्य्य सूर्यास्त से पूर्व होना चाहिये ॥

हनुमान—"सत्य वचन ऐसा ही होगा" ॥

हनुमान जी इतना कह विमानारूढ़ हो देखते के देखते लुप्त हो गये, विमान पर इस प्रकार का शीघ्रगामी था कि लगभग डेढ़ पहर रात्रि व्यतीत हुई होगी कि जब यह गन्धमादन गिरि पर जो किष्किन्धा के ऊपर और भारत के दक्षिण की ओर किष्किन्धा नगर से कुछ दूर था जा पहुंचा, इस समय रात्रि ऐसी अन्धकार मय है कि हाथ को हाथ नहीं सूझता, चारों ओर से भयानक शब्द सुनाई दे रहे हैं, घातक पशु और जंगली जीव बोल रहे हैं, पर्वतों के उच्च शिखर और कठिन घाटियें भयानक रूप धारण कर डरा रही हैं, वायु शांशां करती बह रही

है, सार यह है कि यह वह समय है कि वीर से वीर के होश उड़ जाते हैं परन्तु महाराज रामचन्द्र जी का वीर जरनैल इन बातों का तनिक भी विचार न करता हुआ निर्भय अपना काम कर रहा है, वह देखिये प्रकाश हाथ में लिये हर एक पौदे को देखता और ढूंढता हुआ पर्वत शिखर पर प्रसन्नता पूर्वक कार्य सिद्ध की आशा से जाता है, परन्तु थोड़ी देर के अनन्तर अतीव खिन्न मन हो वापस आ कुछ सोचने लगता है और फिर कुछ विचार कर रथ, और निकल जाता है जब कुछ काल ऐसे ही व्यतीत होगया, और रामचन्द्र जी के वीर जरनैल के कार्य सिद्ध की कोई आशा न मिली तो लक्ष्मण जी का आपत्ति समय आंखों के सामने रूपधार आ खड़ा हुआ अतीव खिन्न चित्त हो विचार में पड़ गया, परन्तु वीरता और सहिष्णुता ने उसके खिन्न चित्त को साहस दिया और कहा कोई कठिनता नहीं जो सुगम न हो, वह कार्यशक्ती ही नहीं जिसमें कार्य सफलता न हो। इतना अवश्य है कि मनुष्य धैर्य धार कटिवध रहे, सो यदि तुम वास्तव में महाराजा रामचन्द्र जी के सच्चे हितैषी हो, तो समय को सोच विचार ही में न गंवाओ किन्तु यत्न करो इस विचार के उत्पन्न होते ही हमारा महावीर फिर ढूंढने लग गया और उस पहाड़ी पर जो गन्धमादन के ऊंचे शिखर के नीचे है जा पहुंचा, आहा!

जब यह वीर भूमि पर दृष्टि पात करता हुआ प्रत्येक पौदे को देखता हुआ जारहा था तब एक असाधारण पौदा देखा कुछ सन्देह उत्पन्न हो गया वहीं प्रकाश (मशाल) लेकर बैठ गया, तब सावधानता से देखा तो उन समस्त चिन्हों को जो सुखेन ने बतलाए थे पाया, तो बड़ी सावधानी से हाथ बढ़ा कर तोड़ना चाहा परन्तु झिझक कर रह गया और मन में कहने लगा कि "विदित नहीं कि इस की शाखा आवश्यक है। जड़ या पत्ते और मात्रा का हाल भी विदित नहीं" पाठकगण! हनुमान कुछ काल तो इसी विचार में रहा अन्त में न जाने क्या सोच कर चार पांच पौदे जड़ से उखाड़ लिये, और उसी विमान पर सवार हो कर अभी एक पहिर रात्रि शेष होगी कि यह अपने कैम्प में आ पहुंचा उस को देखते ही सब के शरीरों में प्राण पड़ गये, वीर हनुमान रामचन्द्र जी को पाद प्रणाम करना चाहता ही था, उन्होंने उठा कर गले से लगा लिया। और सुखेन ने शीघ्रता से बूटी नियमानुसार घाव पर बांधी और कुछ बिन्दु महाराज लक्ष्मण जी के मुख में डालदी। इस बूटी के अद्वितीय फल से तत्काल लक्ष्मण जी ने आंखें खोल दी रामचन्द्र जी ने प्रसन्नता पूर्वक उसका मस्तक चुम्बन किया, और अभी हनुमान जी की श्लाघा और बड़ाई कर ही रहे थे कि लक्ष्मण जी उठ कर बैठ

गये, उन को बैठा देख कर सब कैम्प में प्रसन्नता से हर्ष मद् वाक्य उच्चिरित हुये, हर एक ने हमारे महावीर को धन्यवाद दिया, महाराज रामचंद्र जी ने अपने सेना पतियों को मेघनाथ के छल छिद्र से सूचित कर आगे के लिये सावधान रहने की प्रेरणा की और सब को कुछ काल विश्राम करने के लिये आज्ञा दी ॥

५२ वां, अध्याय ।

७म, दिन का संग्राम ॥

पिछले युद्ध में मेघनाथ की माया जाल और छल ने आज महाराज रामचंद्र जी की समस्त सेना को सचेत बना दिया है, वह देखिये वीर जामवंत और पल्लोपम किस सावधानी से दूरवीक्षण लगाये टकटकी बांधे सामने के पर्वत पर बैठे हैं, जिस से शत्रु के विपरीत आक्रमण इन से छुपे न रहें और इधर युद्ध में वीरों को प्रातः से संग्राम करते २ मध्यान्हकाल हुआ चाहता है सूर्य की तीव्र किरणें तीक्षण धारा खड्गों पर पड़ कर इतस्ततः फैल रही है। परंतु इन के वर्द्धित साहस और अतीव शीघ्रता से अपना काम किये जाते हैं धावा पर धावा कर रहे हैं। मनुष्यों का अमूल्य रुधिर पानी के समान पृथवी पर वह रहा है जिस में वीरों के कटे हुये शिर और तड़फते हुये धड़ इधर उधर तैर रहे हैं, । हा अश्वों के कठिन पाद् प्रहार से सिर तो इधर उधर कंदुक के समान उछलते

फिरते हैं परंतु पांव उदर पर पड़ने से "फुस" का शब्द निकलता है और अंतड़ियें बाहर निकल आती हैं ॥

सहस्रों बीर सुबीर वर, क्षणमात्र के बीच ।
सिर तनसे भिन्न हो, गये परलोक के बीच ॥
बीर बीरता मद से, मद माते भए अनूप ।
मृत्यु अटल वेग को, जाने न तनिक सरूप ।

परंतु इस भयानक दृश्य को देख बीरों के हृदय नहीं हिलते और न वह युद्ध समाप्त करना चाहते हैं वरंच वह देखिये कैसे छाती ताने, नेजा बरछी धनुष और खड्ग चला रहे हैं, यह लो राक्षसी सेना ने धावा कर दिया, हाहा ! इस में सेनापति जो अभी अपनी आधीन सेना के साहस को बढ़ाता हुआ, खड्ग तान-कर निकुम्भ पर गर्जा था किस विध सिर के बल असवारी से गिर रहा है, यद्यपि मेघनाथ की बरछी ने इस के वक्षस्थल को चीर कर अंतड़ियों को बाहर निकाल दिया है, परन्तु इस के धैर्य को देखें कि किस फुर्ती से अपना आप सम्भाल कर खड़ा होगया है, एक हाथ घाव पर है और दूसरे से खड्ग उठाना चाहता है परन्तु इतने में मेघनाथ ने उस के मस्तक पर एक और वार बरछी का किया और निकुम्भ ने खड्ग से उस का सिर तन से भिन्न कर दिया इस की यह दशा और बानरी सेना को पराजित होते देख हमारे महाबीर ने ध्वजा हिलाई

और शंख इस वेग से ध्वनित किया कि वीरों के मन कांप उठे, हनुमान जी या तो अभी कुछ दूरी पर शत्रुओं से लड़ रहे थे। या अभी पल भर में मेघनाथ की सेना पर आ कूदे और ऐसे बाण चलाये कि शत्रु निज पराक्रम को प्रकट न कर सका, उधर वानरी सेना का साहस द्विगुण होगया और ऐसा वेग दिखलाया कि आकूमित शत्रु दल एक पांव भी आगे न बढ़ सका, वरंच इकाएक पांव उखड़े, और संग्राम ने रंग पलटा वानरी सेना ने राक्षसों पर आकूमण किया, वीर वानर सेना के नेजे झुक गये छनछनाती हुई खडगें खिंच गई॥

सेना खड्ग निकाल कर, पड़ी जिस दल के बीच।
सर्व दल को दलन कर, फिर खड्ग ली खींच॥
क्षण भर के बीच में, शत्रु दल कियो विनाश।
छिन्न भिन्न कर दिल रिपु, शत्रु न दियो प्रकाश॥

असंख्य राक्षसी सेना के वीर रणभूमि में लेटकर दीन हीन दृष्टि से निज संगियों को देखने लगे, इस दशा को देख मेघनाथ की क्रोधाग्नि भड़क उठी, मकराक्ष व सूईराक्ष आदि सेनापति इसकी सहायता के लिये आ पहुंचे और घोर संग्राम होने लगा, एक ओर तो रुधिर प्रवाह में सूर्य की किरणें अपना वेग दिखला रही हैं, [illegible], खड्गें अपना कार्य कर रही हैं। पाठकवृन्द! जिस वीरता व साहस से हमारे महावीर करनैल ने मेघनाथ

और उसके दल पर आक्रमण किया, उसकी साक्षी के लिये रामयण के लेख और सूर्य के सिवा कोई नहीं, ऐसी वीरता के समय जब कि चारों ओर से खड्गें चल रही हैं' नेजे से नेजा और बरछी से बरछी भिड़ रही है वीर लक्ष्मणजी का रथवाही भी अपने रथको इधर ही लाया, और जब लग उनके तीर ने मेघनाथ के रथ के पहियों को चूर २ करके फेंक नहीं दिया तब तक किसी को उनके आगमन की सूचिना ही न हुई, मेघनाथ के घोड़ों को घायल और रथ को अयोग्य देख जमूमाली ने तात्काल द्वितीया रथ लाकर खड़ा कर दिया जिस पर सवार होकर देखिये मेघनाथ लक्ष्मणजी के साथ युद्धार्थ सन्मुख खड़ा हो इस प्रकार कह रहा है:—

"क्या कल का ब्रह्मास्त्र भूल गये, जो आज रण भूमि में आ खड़े हुए हो जान पड़ता है कि गुप्त रीति से रामचन्द्र तुम्हारे प्राण लेना चाहता है, तुम्हारे लिये उचित यही है कि रण से पीठ दिखला जाओ और प्राण बचालो अन्यथा आज तुम्हारा बचना कठिन है" ॥

लक्ष्मणजी—क्यों बकवास करता है, वीर सन्मुख होकर युद्ध करते हैं न कि छिपकर, कायर! यह कौनसी वीरता थी जो तूने कल कर दिखलाई बस समझ ले कि आज या तू है या यह (धनुष को टंकार कर) धनुष ॥

हृदय विदारक बान से, तुझे लिटाऊं आज ।

सब सेना के देखते, साधूं अपना काज ॥

मेघनाथ हंस कर कुछ कहना चाहता ही था कि लक्ष्मण जी ने कहा 'यह हास्य मंडप नहीं रण भूमी है, अधिक बातें बनाने का समय नहीं ले सावधान हो' यह कह कर अपने धनुष से बाण छोड़ा जिस को इसने अपने तीर से काट दिया और आप बरछी लेकर आगे बढ़ते देख लक्ष्मण जी ने अपना रथ तनिक पीछे हटा लिया और क्रमशः ऐसी बाणों की वर्षा की कि उस को वार करने का अवकाश ही न दिया एक बाण उस की छाती पर लगा जोकि युद्ध वेष्ठन को काट छाती की हड्डियों को बेध कर पार होगया परन्तु वीर मेघनाथ ने सम्भल कर ब्रह्मास्त्र को छोड़ा जो लक्ष्मण जी के बाण से टकराकर निकम्मा होगया, अब इस ने २य, बाण छोड़ना चाहा परंतु लक्ष्मण जी ने एक ऐसा अलखेधी बाण छोड़ा जोकि मेघनाथ की भुजा को काटता हुआ निकल गया २य, बाण ने शिर को तन से भिन्न कर जीव को शांति प्रदान करा दी, फिर तो राक्षसी सेना में हाहा कार मच गया वीरों के साहस जो पहिले ही शिथिल हुये २ थे भंग होगये और अनेक अधिपातियों की मृत्यु देख यह सब रह गये और निदान पीठ दिखाने के [illegible] कुछ न सूझी। यह लो देखना रावण की सेना किस घबराहट से भागी जारही है और वानरी सेना इनका पीछा कर रही है ॥

५३वां अध्याय ।

अष्टम दिवस संग्राम ॥

दो०–रक्षक लंका नगर के, रोवत द्वारे ठाड़ ।
सारी शोभा लंक की, आज चली है छाड़ ॥

राक्षसों ने पराजित रात्रि आखों में से काटी समस्त शक्ति युद्ध सामग्री के एकत्र और सम्पति में बिता दी। रावण वानरद्वीप के वीरों को तो युद्ध के आरम्भ ही से नमस्कार कर चुका था क्योंकि इन के निकट इस विवाद के मूल कारण वही थे। जो महाराज रामचंद्र जी की ओर से युद्ध कर रहे थे परंतु जब* उन लोगों ने जिन के पराक्रम पर लंका की राजधानी महत्वता प्रकट करती थी और यह महत्वता भी अयोग्य न थी क्योंकि वह महाराज रावण के अधीन थे, जब इन से सहायता की प्रार्थना की तो इन्हों ने टका सा जवाब दिया, 'कि हम लोग नहीं आ सकते' हां। ऐसे कठिन समय में अपने अधीन राजाओं से ऐसा रूखा उत्तर सुन कर और वानर द्वीप निवासियों को अपना शत्रु देख रावण का मन जो मित्रगण व बंधुओं के मारे जाने और नित्य की हार से पहिले ही अग्नि के समान प्रज्वलित होरहा था एका

* यह लोग छोटी २ राजधानियों के राजा थे, जिन को विजय कर रावण ने कर दाता बनाया हुआ था, यहां इन के सविस्तर वर्णन की अवश्यकता नहीं. वाल्मीकी लंका काण्ड और मिस्टर मेफयस साहिब की पांचवीं पुस्तक की २३२ वीं पृष्ठ देखो ।

एक क्रोध से भड़क उठा, और भान्ति २ के विचार शत्रु को दण्ड देने के विषय में उत्पन्न होने लगे, कुछ काल तक तो इसी धुन में लगा रहा, परन्तु जब अपनी दशा पर दृष्टि डाली और निज मन्द भाग्यता को सोचा तो अपने ही दुर्व्यवहार अहंकार इन्द्रिया शक्ति आदि मानो सब रूप धारण कर सामने खड़े होगये, और इसके मनको भर्त्सना करने लगे, इस समय खेद से हाथ मलने और ठण्डी सांस भरने के सिवा कोई उपाय न सूझा, अंत में रथ सवार हो असंख्य सेना को संग ले (जिसकी गणना हमारी शक्ति से बाहर है) रण-भूमि में आ पहुंचा, और वहां आते ही मेघनाथ के मृतक शरीर का चित्र आखों के आगे आगया, मन कांप उठा अंतःकरण विदीर्ण होगया और मन ही मन में कहने लगा, "हा ! मेरे वीर प्रिय पुत्र ! तेरे घातक अभी तक सजीव हैं, जब लग मैं उनसे बदला नहीं लेता मुझे चैन नहीं पड़ता, आह ! तेरी वीरता साहस की तो सर्वत्र चर्चा थी, इंद्र, यम और कुबेर तो तेरी दृष्टि से कांपते थे, तू इनके हाथसे किस प्रकार मारा गया," इसी प्रकार के विचार उत्पन्न हो २ कर उसके मन को निर्बल कर रहे थे। कि सामने शत्रु सेना पर दृष्टि पड़ी और इन को नियम पूर्वक युद्ध के लिये उद्यत देखा, इन्द्र, यम, और कुबेर को भी अपने; विरुद्ध शत्रु की ओर से संग्राम

करने के लिये तत्पर देखा तो क्रोध की सीमा न रही, उनकी अनभिज्ञता ऐसे कड़े वक्त में करते देख इसकी नाड़ी २ में कोपाग्नि जाग उठी नेत्र लाल होगये, शरीर कांप ही रहा था कि युद्धारम्भक शंख ध्वनि ने कानों को आ खेंचा, युद्धवाद्यों को वीरों को जोश दिलाने वाले घण्टाघोष सुनाई दिये, और धनुष की टंकार से गगन-मण्डल में गूंज हो हृदय को वेधन कर गई, तो महाराजा रावण जो बड़ी असावद्दल धानीसे इस समय की प्रतीक्षा कर रहा था, देखिये एक वीर दल लेकर किस विध रथ को बढ़ाता हुआ उसी ओर शत्रु दल पर जा रहा है, जहां महाराज रामचन्द्र जी वरुण, कुवेर, आदि २ अपने २ वीरों की वीरता देख रहे हैं, यद्यपि महाराजा राम-चन्द्र जी के शूर वीरों ने भी बड़ी योग्यता से इनका सामना किया और रथ के रोकने का यत्न किया परन्तु इस बलवान् राजा के रथ को कोई भी रोक न सका वरंच इस यत्न में कई वीर हनन होगये। और क्षण भर में यह आक्रमण करनेवाला दल सैकड़ों योधाओं को। परलोक गमन कराता हुआ कुछ दूर पहुंचा, तो महाराज रामचन्द्रजी की दृष्टि इधर पड़ गई, तात्काल सेना दल को सम्भाल रथ आगे को बढ़ाया और सामने डट कर ऐसी तीरों की वर्षा की कि शत्रु के हाथ पूर्व जैसी शीघ्रता वेग दिखलाने से रुक गये वीर इन्द्र, यम, कुवेर

आदि वीरों ने आगे बढ़ते हुए शत्रु को वहीं रोक लिया मानों परस्पर संग्रामित दल शक्ति को एक रस कर दिया हाहा ! पल भर में सैकड़ों वीर बानों से वेधे गये ॥

पाठक महाशय ! आज का संग्राम कोई साधारण संग्राम नहीं है देखिये रावण का हाथ किस विध फुरती से चल कर चकित कर रहा है और अब समस्त सेना इधर को ही झुक पड़ी है, दोनों ओर के वीर भाग हाथ पर धरे आगे बढ़ २ कर वार कर रहे हैं, फट जाने वाले गोले (बम्ब) और अन्यान्य कई विचित्र शस्त्र आज संग्राम में वरते जा रहे हैं मुरदों के ढेर कई स्थानों में पड़े हैं ओ लो ! एक ही बाण लगने से महाराजा रामचन्द्र जी का रथ, निकम्मा होगया, परन्तु राजा इन्द्र ने तात्काल रथ, ला खड़ा किया जिस पर आरूढ़ हो महाराज रामचन्द्र जी रावण की ओर बढ़ रहे हैं अभी थोड़ी ही दूर गये थे कि रावण ने एक बाण और चलाया जिसको उन्हों ने अतीव शूरता से मार्ग में ही काट दिया, बस फिर क्या था दोनों वीर आम्हने साम्हने डट गये, और बड़ी देर तक दोनों में बाण वर्षा होती रही किसी को साहस न पढ़ा कि इनके मध्य में हसता क्षेप करे, जब बाणों से काम निकलता न देखा तो दोनों ने विद्युत के समान खड्गें निकाल लीं, देर तक इन की निपुणता परस्पर दिखलाते रहे, अन्त में एक गहरा घाव लगने

से रावण घबरा गया, और खड्ग को त्याग बरछी ले रामचन्द्रजी पर धावा करना चाहा परन्तु इतने अवसर में रामचन्द्रजी के सारथी ने घोड़ों की बाग ऐसी सावधानी से फेरी कि रथ तात्काल पीछे हट गया और रावण की वार व्यर्थ गई, और इसके उतर में रामचन्द्रजी ने एक बाण धनुष से ऐसा छोड़ा जो रावण के हृदय को बेधता हुआ पार हो गया और वह दीन रथ से नीचे गिर पड़ा॥

चौपाई।

गिरा भुमि पर जब दस कन्धर,
महा परतापी वीर धुरन्धर।
राक्षस सारे भए दुखारी,
सुरादिक सब भए सुखारी॥

हा! देखिये! रावण भूमि पर तड़प रहा है, और शेष सेना जो उसी मैदान की विस्तृत भूमि में उतर की ओर डटी थी अभी तक युद्ध कर रही है और इधर विजय पताका आकाश में उड़ने लगा, महाराज रामचंद्र जी के जय २ कार की ध्वनि आकाश तक पहुंच गई, प्रसन्नता द्योतक हर्ष जनक शब्द सब ओर से आने लगा और शत्रु दल ने शस्त्र फैंक श्री रामचंद्र जी की शरण मांगी॥

पाठक महाशय! रावण को भूमि पर तड़फते देख बिभीषण को भ्रातृप्रेम ने आ घेरा, शीघ्रता से रथ

को चला उस के निकट जा पहुंचा, परंतु खेद कि इतने में वह परलोक यात्रा कर चुका था और मृत्यू ने उस के शरीर को ठण्डा कर दिया था, अब रावण हाथ पांव फैलाये मृत्यु शय्या पर पड़ा है, शरीर रुधिरा क्रांत है परंतु मृग के समान नेत्र वैसे ही खुले हैं, जैसे कि पहिले थे। विभिषण को भाई की यह दशा देखते ही उस की विद्वत्ता के कथन, वीरता के व्याख्यान और बल युक्त साहसमय पुर्वोक्तकथन स्मरण आगये, उधर वंश के विनाश और अपने एक मात्र रह जाने और सब के वियोग ने इस के आतुर हृदय को और भी विदग्ध कर दिया, सब ज्ञान के वचन इस समय भस्मी भूत हो धूम्र रुप धारण कर मस्तिष्क को चढ़ गये और बेसुध हो भूमी पर गिर पड़ा जब तनिक सुध आई तो उठ कर बैठ गया॥

अब देखिये दोनों हाथ भुमि पर टेके रावण के मुख को देखता हुआ हाय भ्राता हाय भ्राता! कह कर कैसे विलाप कर रहा है और बहुत से बीर सर्दार इस की चारों ओर बैठे रो रहे हैं। वह लो मंदोदरी भी इस की मृत्यू का समाचार सुन रथारूढ़ हो रोती चिल्लाती आरही है, हा! जैसे यह उस मृतक शरीर के निकट पहुंची और अपने स्वामी को रुधिरा क्रांत हाथ पांव फैलाये भूमि पर पड़े देखा बेसुध हो गिर पड़ी, जब सुध आई तो रो रो कर कहने लगी" हा! पति तेरी यह

दशा क्योंकर हूई तुम से तो इन्द्र, यम, कुवेर आदि डरते थे आज तुम्हारी वह वीरता कहां गई जो इस प्रकार वेसुध पड़े हो ! हाय मेरे कथन का उत्तर क्यों नहीं देते ? स्वामिन् ! आप के सिवा मुझ अधीर को कोई धैर्य देने वाला दीख नहीं पड़ता, हा ! प्रिया पुत्र पहिले ही सिधार गये, पौत्र प्रपौत्र भी दीख नहीं पड़ते । हा ! वीर कुंभ-करण सरीखा देवर भी इस युद्ध की भेंट हुआ हा ! विधाता अब मैं किधर जाऊं क्या करूं स्वामिन् ! आप को बहुतेरा समझाया लाखों यत्न किये कि आप इस हठ को छोड़ दें परंतु खेद कि आप ने एक न मानी' पाठकगण ! मंदोदरी इस प्रकार विलाप कर ही रही थी कि महाराज रामचंद्र जी और लक्ष्मण जी वहां पर आगये और कहने लगे, मंदोदरी तू आप बुद्धिमति है तनिक न्याय पूर्वक आप ही कहो कि जो दशा तेरे पुत्र या पौत्रों की हुई उस में किस का अपराध है देवी ! जब तू स्वयं दूर दर्शिनी और न्यायकारिणी है तो धर्म से न्याय कर कि तेरा स्वामी जो अतीवाभिमानी आत्मश्लाघी और किसी की बात को न सुनने वाला था, उस की यह गत होनी चाहिये थी या नहीं ? तुम ने स्वयं बहुतेरा समझाया और हमने भी सहस्रों यत्न किये परंतु इस ने तनिक ध्यान न दिया अब कहिये इस को यह दिन भी देखना था या नहीं ? रानी संतोष कर कर्मरेख टारे नहीं टरती इस में किसी

का दोष नहीं यह इन्हीं के कर्मों का फल है अब तुम्हारे विलाप से शत्रु प्रसन्न मित्रों को खेद होने के सिवाय क्या प्राप्त होगा, यह संसार नाश रूप है कोई स्थिर नहीं रहता। हां कोई दस दिन पहिले कोई दस दिन पीछे पर मरना सब ने है। सो अब उचित यही है कि धैर्य धारो और इसका मृतक संस्कार करो॥

५४वां, अध्याय

विभीषणको राज्यसिंहासनऔररामचन्द्रजीकीवापासि

"चक्रवत्परिवर्तन्ते सुखानी दुःखानिच"

आहा! संसार शिक्षागार है देखिये कल विलाप करते २ विभीषण मूर्छित हो रहा था, और रावण की मृत्यु होने से खेदित दीख पडता था आज इसके मन्दिर के आगे हर्ष सूचिक वाद्य वज रहे हैं, प्रत्येक स्थान में प्रसन्नता प्रकट होरही है, मंत्री और अधिकारी वर्ग उत्तमोत्तम वस्त्र पहिरे राज्य दरबार में जारहे हैं। आहा! आज क्या है? जो लंका के आवाल वृद्ध निवासी सब प्रसन्न वदन प्रतीत होते हैं प्रसन्नता द्योतक शब्द राज दरबार से आरहे हैं, पाठकवृन्द! आप चकित क्यों होगये

* उपरोक्त युद्ध में जहां तक हमने रामायण में देखा है हमारे धीर का कहीं ऐसा सम्बन्ध नहीं पाया जाता परन्तु यह भी उचित प्रतीत नहीं देता कि इन्द्रिया शक्ति के परिणाम का वर्णन न किया जावे॥

यह देखिये श्री लक्ष्मणजी विभीषण को राज्य तिलक देने के लिये जारहे हैं। हैं! इतनी शीघ्र? कल तो यह रोरोकर बेसुध होरहा था और आज ऐसी खुशी मनाई जारही है। खेद! महाशय खेद किस बात का? संसार स्वार्थागार है, लोग अकृतज्ञ हैं, किसी की करनी नहीं जानते और को त्याग यदि हम अपने ही शरीर पर दृष्टि दें और विचारें तो यह भी अकृतज्ञ और शत्रुओं का घर प्रतीत होगा, हा! शत्रु भी वह जो लोक परलोक को बिगाड़ें वह कौन? कर्मेन्द्रियें जिनकी प्रबलता से अनुचित वासनायें उत्पन्न होती हैं, और उस समय उचितानुचित की विचार भी नहीं रहती, और निज वासनाओं की पूर्ति के लिये हम लोग चोरी यारी छल छिद्र के अनुयायी हो जाते हैं। अंत में इसका परिणाम यह होता है कि परलोक बिगड़ जाता है सज्जनों की दृष्टि में पतित होजाते हैं। भाई! दूर क्यों जाते हो, तनिक रावण की ओर ही दृष्टि कर लो! चारों वेद और षट्शास्त्र का ज्ञाता और इतने राज्य का स्वामी होने पर भी केवल दुष्ट काम की प्रबलता से संसार की दृष्टि में ऐसा पतित हुआ। कि आज हम लोक उसके मस्तिष्क की श्लाघा करने के बदले और माननीय ब्राह्मण कुल भूषण जानने के स्थान उस महान् विचार शील शिर को गधे के शिर से उपमा देते हैं केवल यही नहीं इसकी प्रजा को भी उसी के पीछे हम लोग

राक्षस पशु श्रृंगधारी समझते हैं इस लिये मनुष्य मात्र को उचित है कि व्रह्म शत्रुओं को छोड़ पहिले अपने ही अभ्य-न्तरिक को नाश करें, ईश्वर पर विश्वास रक्खें और उसी के दिये पर सन्तोषी रहैं, यह सब ऐश्वर्य धन भोग नाशवान हैं, देखिये कल रावण का राज्य था आज विभी-षण के सिंहासनारूढ़ का उत्सव होरहा है। वह लो राज्य सिंहासन पर सुशोभित भी होगया, लक्ष्मण जी राज्य तिलक देकर और विभीषण भेटा लेकर महाराज रामचन्द्र जी की सेवा में जारहे हैं॥

आहा! क्या जाने हमारे पाठक गणों की रुचि श्री सीता जी के दर्शनार्थ अशोक वाटिका में घूम रही हो नहीं महाशय सीता जी वहां नहीं हैं उनको तो हमारा महावीर जरनैल रात को ही बड़ी धूम धाम से रथारूढ़ करके ले गया था। वह देखिये महाराज रामचन्द्र जी की बाईं ओर धर्म की मूर्ति सुशीलता और पति व्रता का साक्षात स्वरूप श्री सीता महारानी विराजमान हैं। पाठक गण! जब विभीषण ने बहुमुल्य रत्नों के सहस्रों थाल महाराज रामचन्द्र जी को भेटा किये तो उन्हों ने उन की तरफ केवल एक वेर आंख उठा कर देखा, और फिर विभी-षण से कहा कि यह हमारे काम के नहीं इन सब को उन लोगों में (सिपाहियों की ओर देख कर) वितरण करदो। इस आज्ञा को विभीषण ने तात्काल पालन किया अब वीरों

को पारितोषिक मिल चुका तो महाराज रामचन्द्र जी ने समस्त अधिकारियों को एकत्र कर सब को मान और श्लाघा पूर्वक धन्वाद दे विदा किया, और स्वयं अयोध्या जी को पधारने के लिये विभीषण से आज्ञा मांगी ॥

विभीषण—"महाराज नगर में चल कर एक दो दिन विश्राम कीजिये समस्त लंका निवासी आप के दर्शन के अभिलाषी हैं" ॥

रामचन्द्र—"हम को नगर में जाने में कुछ उज़र नहीं परन्तु हम अपनी पूर्व प्रतिज्ञा को भंग नहीं कर सकते क्योंकि आज १४वें वर्ष का अन्तिम दिन है, न ही कल का दिन ठहर सकते हैं क्योंकि भरत जी बड़ी असावधानी से देख रहे होंगे, यदि एक दिन भी बनवास काल से अधिक व्यतीत होगया तो न जाने उन के मन में क्या २ विचार उपजेंगे। माता कौशल्या न जाने क्या कुछ ना कर बैठे, उचित यही है कि अब हमको आज्ञा दीजिये कि हम अपने देश को जायें" ॥

विभीषण—(हाथ जोड़ कर) "आप जाने की चिन्ता न कीजिये, पुष्प विमान ऐसा शीघ्र गामी है कि एक ही दिन में आप को अयोध्या में पहुंचा देगा, और मैं भी आप के संग अयोध्या जी चलूंगा ॥

महाराज राम चन्द्र—जो कुछ आप ने कहा है सत्य है, परन्तु अब हम किसी प्रकार से ठहर नहीं सकते यदि

कुछ कलेश न हो तो पुष्प विमान मंगा दीजिये और आप भी चलने की तय्यारी कीजिये,, ॥

विभीषण—" बहुत अच्छा,, ॥

थोड़ी देर में पुष्प विमान आगया, जिसमें महाराज रामचन्द्र जी, सीताजी, लक्ष्मणजी, विभीषण, सुग्रीव, नल, नील, अंगद और हमारे पुस्तक का लक्ष (हनुमान जी चढ़ बैठे और शेष सामग्री तथा अन्य वानर लोग जिनका अधिक प्रेम था, दूसरे विमानों पर बैठ गये, जब सब विमान पर आरूढ़ होचुके तो भारतवर्ष के प्राचीन काल के विमान इस वायु वेग से चले कि जिनकी उपमा देने के लिये आजकल कोई यंत्र प्रतीत नहीं होता, महाराज रामचन्द्र जी प्रत्येक स्थान का मार्ग में आता है वर्णन जो सीताजी को बतलाते जारहे हैं, जब किष्किन्धा नगरी दृष्टि पड़ी तो रामचन्द्रजी ने सीता जी से कहा, कि "प्रिये! वह देखो किष्किन्धा के महल दीखते हैं यह वह स्थान है जहां पर सुग्रीव से हमारी मित्रता हुईथी, और बाली मारागया था" ॥

सीताजी—महाराज! क्या ही अच्छा हो यदि आप रोमा, तारा प्रभृति वानरों की * स्त्रियों को जिनको आप

* क्यों महाराज! अब भी आपको हनुमान सुग्रीव आदि के मनुष्य होनेमें संदेह है तो बतलाइए सीताजीको बेचारी बन्दरियों से क्या प्रयोजन और उनसे बात चीत करके क्या लाभ उठा सकती थीं, पाठकगण! यह सब मिथ्या भ्रम है जिसका सविस्तार हम १ म, भाग में वर्णन कर आए हैं (देखो) बाल्मीकी रामायण पृ० १४० लंकाकाण्ड सर्ग १४५) ॥

भली भांति जानते हैं, और वह इस समय किष्किन्धा में विद्यमान भी हैं अपने सङ्ग अयोध्या में ले चलें जिससे मैं उनसे वार्तालाप का लाभ उठाऊं, यह सुनतेही महाराज रामचन्द्रजी ने सुग्रीव की ओर देखा, और उसने भी सीता जी के कथन का अनुमोदन किया, जब विमान किष्किन्धा पर पहुंचा तो वह भूमि पर उतारा गया, और सुग्रीव नगर में जाकर सब स्त्रियों को तात्काल साथ ले आया और वहां से चलकर भारिद्वाज ऋषि के आश्रम पर पहुंचे क्योंकि यह चौदहवीं वर्ष की अन्तिम रात्रि थी, इसलिये रामचंद्रजी ने भी यही उचित जाना कि पहिले हनुमान जी को भरत जी के पास भेजा जावे जिस से वह चिंतासागर से विमुक्त हो और प्रसन्नता प्राप्त करें और आप वहीं रात्रि व्यतीत करने का निश्चय किया ॥

५५वां अध्याय ।

नन्दी ग्राम ।

दोनों समय मिल रहे हैं, प्रकाशित दिन विदा हो रहा है, या यह समझें कि सूर्य भगवान अपने प्रकाश की गठड़ी बांधे पश्चिम दिशा से मिलने को जारहा है, और संध्यादेवी के आगमन का समय अतीव निकट है वह महाशय जिनको इस प्रकाश युक्त दिन से कुछ प्रेम है और पवित्र वेद ऋचाओं की शाखा जिनके हृदय में अंकित हैं

वह इस बहुमूल्य समय को अहोभाग्य से प्राप्त शुभ समय जानकर अभी से हाथ में जल का लोटा और बची में आसन दबाए नगर से बाहर जारहे हैं और बहुत से गृहस्थी जो दिन भर सांसारिक कामों में आसक्त थे और उन को इतना अवकाश ही नहीं मिलता कि वह खुले मैदान में जा कर सन्ध्या वन्दन कर सकें, परन्तु इस समय वह भी इसी विचार में हैं,कि घर में कोई एकान्त स्थान मिले तो अपने नित्य नियमों को पालन करें ऐसे समय पर हमारी वृत्ति जिस ओर जा रही है वह अयोध्या के निकट एक नंदी ग्राम है, जिस के उत्तर की ओर एक छोटा मन्दिर है और जिस के आगे कुछ हरे भरे वृक्ष लहलहा रहे हैं इस मन्दिर के दालान में एक साधु लम्बे कद साँवले रंग का जटा धारी जिस के मुख से उदासीनता टपक रही है बैठा हुआ सन्धया कररहा है और जल का लोटा आगे धरा है, कुछ देर तक तो नेत्र मून्दे न जाने किस विचार में मग्न रहा और फिर यह कहना आरम्भ किया। हे परमात्मन् ! आप ही उस प्राणनाथ रामचन्द्रजी के हृदय को प्रेरणा करें, कि भरत निर्दोष है अब शीघ्र उस को दर्शन दें, उन का कथन था कि १४ वर्ष के अनन्तर एक दिन भी हम बाहर न ठहरेंगे और यदि कुशल रही तो एक दिन पूर्व तुम को आगमन की सूचना देंगे, हा ! वह सुखदायक दिन आज ही का है, जिस पर मेरे जीवन का

निर्भर था और जिसके आने की आशा चिर काल से लग रही है, इसी चन्द्र रूप दिन को मेरे नेत्र चकोर के समान तरस रहे थे न जाने रामचन्द्र जी का मन मेरी ओर से क्यों कर कठोर होगया, या कोई और कारण है जो अभी तक किञ्चित् समाचार नहीं आया, हा ! इस में कुछ भय की बात अवश्य है, यह कहा और ग्रीवा झुका कर न जाने किस विचार में डूब गया। पाठकगण ! जिसको हम साधु समझे थे वह वास्तव में भरत है, जो रामचन्द्र जी की प्रतीक्षा में देखिये किस प्रकार चिन्ता मग्न हो रहा है, क्या आप निश्चय कर सकते हैं कि यदि भरत रामचन्द्र जी की आपत्ति का वर्णन सुनता तो चुप चाप रह सकता था, उन की सहायता को न पहुंचता ? नहीं कदापि नहीं तात्काल सुनते ही जिस प्रकार हो सकता अपने आप को वहां पहुंचाता ? हमारी निर्बुद्धिता ने भरत के स्वच्छ पवित्र जीवन को भी कलङ्कित कर दिया, खेद एक अनुपम प्रमाणको ही अपवित्र दशा में बदल दिया ॥

पाठक गण ! जब ही भरत जी ने सिर उठाया, तो हनुमान जी को जो इन की बातें श्रवण कर रहे थे, अपने पाऊं पर पाया, शीघ्रता से उस का सिर उठाया और बोले भाई तू कहां से आया है और मुझ से क्या काम है ?

हनुमान—"महाराज मैं रामचन्द्र जी का सेवक हूं, और उन के आगमन की शुभ सूचना लाया हूं, कि कल

प्रातःकाल वह आनन्द पूर्वक यहां पहुंच जावेंगे" ॥

आहा ! इस खबर को सुनते ही भरत जी का मुख प्रसन्नता से प्रफुल्लित होगया, " कलेजा खुशी से उछलने लगा कुछ काल तो अतीव चकितता से हनुमान की ओर देखते रहे, फिर कहने लगे, " क्या महाराज राम-चंद्रजी कल अवश्य आवेंगे और आज वह कहां हैं" ?

हनुमान —" महाराज वह विभीषण, सुग्रीव, अंगद प्राभृति वानरों सहित आज रात भारद्वाज ऋषि के आश्रम पर रहेंगे और कल सूर्योदय से पूर्व यहां पहुंच जावेंगे" ॥

भरत (विस्मय हो)" क्या सच्चमुच्च कल सुबाह ही आजायेंगे और आज भारद्वाजके आश्रम पर ठहरे हैं" ॥

हनुमान — जी हां ॥

यह सुनते ही भरत जी ने जो सब से पूर्व काम किया वह यह था कि उसी समय शत्रुघन जी को बुलाया रनवास में सूचना दी, नगर में प्रसन्नता द्योतक शुभ घोषना की आज्ञादी, फिर हनुमान से बोले अब कहिये, विभीषण, अंगद और सुग्रीव कौन हैं और रामचंद्रजी से उनका क्या सम्बंध है" ?

पाठकगण ? हनुमान भरतजी को महाराज राम-चंद्रजी की आपत्ति वार्त्ता सुना ही रहा था, कि कौशल्या सुमित्रा और कैकई महाराज दशरथ की तीनों रानियें आगई । हा ! तनिक कौशल्या को देखिये कैसी दुर्बल

होरहा है, मुख पीत पड़ गया है, शरीर में रुधिर का नाम नहीं दिखलाई देता, ओहो! रथ से उतर कर यहां तक आने की सामर्थ्य भी नहीं। अय है! देखिये! सुमित्रा कैसे थाम कर ला रही है, जैसे ही द्वारपर पहुंची किसी ने कह दिया" वह पुरुष जो भरत जीके सन्मुख बैठा है जिसको रमचन्द्रजी ने भेजा है, सीता जी के गुम्म होने का समाचार सुना रहा है, हा! गुम्म होने का शब्द सुनते ही बदन में सन्नटा सा छागया, और आंखों के आगे अन्धकार फैल गया, और बेवस होकर गिर पड़ी, कौशल्या को गिरते देखकर अब देखिये लोग वहीं तसल्ली देकर उठा रहे हैं, हनुमान ने जो अभी तक भरत जी की ओर मुख किये बैठा था शीघ्रता से कहा, माता यह तो मैं भूत का वृत्तान्त कह रहा था, वह तो अब तीनों आनन्द पूर्वक भारद्वाज के आश्रम पर हैं और कल प्रातःकाल आपके पास आजायेंगे, घबराने की कोई बात नहीं॥

कौशल्या—क्या यह सच्च है जो तुम कह रहे हो? या केवल सान्त्वन की बातें हैं"॥

हनुमान—" माताजी जो कुछ मैंने कहा सत्य है निश्चय समझें"॥

कौशल्या—तो फिर वह क्या बात थी जो तुम सीता के गुम्म होने के विषय में कह रहे थे?

हनुमान ने फिर दूसरी बेर रामचन्द्र जी की आपत्ति का वर्णन करना आरम्भ किया और इन ही बातों में प्रातः काल हो गई। महाशय गण ! इतने काल में महाराज रामचन्द्र जी के आगमन का समाचार आबाल वृद्ध में फैल गया, वह ! अभी से लोग आने आरम्भ होगये हैं सूर्योदय से पूर्व २ इतनी बड़ी भीड़ भाड़ होगई कि जिस की संख्या करनी हमारी शक्ति से बाहिर है। पाठकगण ! तनिक विचार तो करें कि जब किसी का प्रिय सम्बन्धी दो चार दिन के अनन्तर यात्रा से वापस आता है तो कैसी प्रसन्नता होती है। यह अयोध्या नरेश (राजा) का पुत्र जिस ने केवल पिता की आज्ञा पालन के लिये १४वर्ष का वनवास लिया था, और रावण जैसे सुप्रसिद्ध राजा पर विजय पा कर वापस आता है, क्या यह सब बातें साधारण प्रसन्नता की हैं ! नहीं, हम जोर से कह सकते हैं कि ऐसी प्रसन्नता का अवसर किसी को नहीं मिला जो आज इन लोगों को प्राप्त हो रहा है, देखो चारों ओर प्रबलता के बाजे बज रहे हैं, सेना प्रशस्त हो खड़ी है, नन्दी ग्राम का वह मैदान जो इस के दक्षिण की ओर है मनुष्यों से भरपूर है, और प्रत्येक मनुष्य की दृष्टि बड़ी उत्कण्ठा से आकाश को निहार रही है यह लो भुजायें उठ गई अंगुलियें सीधी होगई क्या जाने विमान दृष्टि गोचर हो गया है। हां

यही निःसन्देह ठीक है, वह देखिये अब तो विमान भली भांति दीख रहा है और इन लोगों के पांव भी बेबस हो आगे को बढ़ रहे हैं, जैसे ही विमान भूमि पर उतरा रामचन्द्र जी ने शीघ्रता से उतर कर भरत जी को छाती से लगा लिया, इस समय देखिये दोनों भ्राताओं के नेत्रों से प्रसन्नता का जल टपक रहा है, फिर शत्रुघ्न से मिले और केकई के चरणों में प्रणाम कर सुमित्रा के पांव पर सीस निवाया, और अब कौशल्या की मनो कामना पूर्ण कर रहे हैं, आहा ! सीता जी की ओर देखिये किस आनन्द से सब से मिल रही है । मंत्री गण तथा अन्याधिकारी इन सब पर पुष्प वृष्टि करते हुए प्रसन्नता प्रगट कर रहे हैं । सार यह है कि देर तक नन्दी ग्राम के इस मैदान को प्रसन्नता लाभ होती रही, तदनंतर सब रथों बहिलियों और अश्वों पर आरूढ़ होकर अयुध्या जी को पधारे, दो तीन दिन तक निरंतर प्रत्येक घर में प्रसन्नता द्योतक वाद्य और हर्ष सूचक मंगलाचार होते रहे, अंत में महर्षि वसिष्ट जी ने एक दिन नियत कर महाराज राम— चंद्र जी को राज्य तिलक दिया। और तदनंतर हनुमान सुग्रीव विभीषण और अंगद प्रभृति को इस देश के बहु मूल्य अपूर्व पदार्थ देकर विदा करने लगे, तो सीता जी ने अपने मनोहर वचनों से सब का धन्यवाद किया और अपने गले से बहु मुल्य रत्नों की माला उतार हनुमान जी को देकर

इनको जाने की आज्ञा दी, जैसा कि वह देखिये, यह सब पुष्प विमान पर आरूढ़ होकर अपने २ देश को जा रहे हैं।

५६ वां, अध्याय

रत्न पुर।

दोहा- ऋत बसन्त जाचक भए, तरिवर दीन्हे पात।
तातें नव पल्लव भए, दीन्हु कतहु नहीं जात।

सायंकाल का समय है, रात्रि अंधकार क्षण २ में बढ़ा रहा है और ज्योतिःप्रकाश घर २ में होरहा है इस समय हमारे मनकी बाग डोर जिधर जा रही है वह रत्न-पुर के राज्य भवन के उच्च मंदिर का वह दालान है जिसे हमारे पाठकगण ने १ म, भाग में देखा है कि डोली आने के समय स्त्रियों से भरपूर था, आज उस में सायंकाल के समय उपासना से निश्चित हो राजा पवन एक रत्न जड़ित आसन पर बैठा है और उसके सन्मुख अंजना देवी चिन्ता पुर रूप में सरह्वाने की ओट लिये बैठी है और इसी दालान के उत्तरी ओर एक द्वार प्रतीत होता है जिस में से एक स्त्री का करुणामय शब्द सुनाई देरहा है यद्यपि यह शब्द किसी परिचित का है परन्तु स्पष्ट रूप से विदित नहीं होता कि किस का है, हां कभी २ पद्मरागा के शब्द का संदेह होता है, क्योंकि द्वार पर पटतना

है इस लिये न तो हम कुछ देख ही सकते हैं और न ही भली भांति समझ सकते हैं, कि क्या वार्तालाप हो रहा है परन्तु हां इतना अवश्य प्रतीत होता है के शिक्षा जनक वार्तालाप हो रही है, जिसके श्रवण करने की आसक्ति में अंजना देवी की उद्विग्नता का हाल जानने के बिना जोप्रायः हनुमान जी के वियोग का फल है हमने अपने विचार को उस कमरे में पहुंचा दिया, आहा निस्संदेह हमारा विचार ठीक निकला, देखिये पद्मरागा नित्य कर्म्म से निवृत्त हो मनोहरलता, इन्द्रमनी और रोहणी प्रभृति को जो इस के निकट बैठी हैं कह रही है प्यारी बहिनों ! निज मन को सदैव ईर्षा, द्वेष, शत्रुता, विरोध और परस्पर की फूट प्रभृति से सदैव बचाये रखना चाहिये, क्योंकि आध्यात्मिक और आधिदैविक योग्यता प्राप्ति के लिये मन की शुद्धता उत्तम साधन है, मन को शीशे से उपमा देते हैं, यदि शीशा साफ सुथरा हो तो उसमें जो कुछ देखे दीख पड़ता है यदि उस पर तनिक भी धूलि या कोई मैल छाई हो तो साफ किये बिना कुछ भी प्रतीत नहीं होता सखी ! इसी प्रकार ठीक मन की अवस्था है, यह मन ही है जो साधु असाधु की पहिचान करता है और जो विचार या सम्मति दृढ़ कर सकता है चाहे वह शुभ हो या अशुभ, सारांश यह है कि मन को जिस ओर लगायें लग जाता है, इसी लिये प्यारी जीवन काल को अपूर्व जान कर

इसे शुभ कर्म्मों में प्रवृत्त करे और बुरी बातों से बचाये और ऐसे पुरुषों के मेल मिलाप से सदैव बचते रहना चाहिये जिनके हृदय में कुछ हो और बाहर से कुछ और ही प्रकट करें क्योंकि ऐसे मनुष्य की संगत अशुभ फल दायक होती है ॥

पाठकगण! पद्मरागा अभी अपना कथन समाप्त करने ही न पाई थी कि दालान में से हमारे रत्न महावीर का शब्द कमरे में आया बस फिर क्या था सभा की सब उसी दालान में आगईं और देखा कि हनुमान जी अंजना देवी के पास फरश पर बैठे हैं, और वह कह रही है कि "पुत्र! इतना भी तो मन कठोर नहीं करना चाहिये, कि छै महीनों तक गृह की सुध ही न लेना तुम तो यहां से कुछ दिनों के लिये गये थे कि सुग्रीव और बाली का फैसला कराके शीघ्र आजाऊंगा" ॥

हनुमान– माता! क्या कहूं पहिले तो बाली से झगड़ा होता रहा, अनन्तर महाराजा रामचन्द्रजी की सहायता से उसका तो बध हुआ, परन्तु महाराजा राम चन्द्रजी का वर्णन जो आप ने सुन ही लिया होगा क्या उससे अधिक भय जनक नहीं था? आप ही न्याय कीजिये ऐसी दशा में मुझे अपेक्षा करनी उचित थी?

अंजना– "नहीं पुत्र! कदापि नहीं, यह जीवन क्षणिक है इस में जो समय उपकार में व्यतीत हो वही

शुभ है विशेष करके परदेशी की सहायता करनी सब से श्रेष्ठ है, परन्तु शरत यह है कि वह सत्य पर हो" ॥

पवन- (बीच में ही) "रावण को क्या होगया जो इतना हठकर वैर बढ़ालिया और थोड़ी सी बात के लिये अपना सर्वस्व और वंश का नाश करा लिया" ?

हनुमान-महाराज हम लोगों ने बहुतेरा यत्न किया अतीव समझाया इस के सिवा श्री रामचन्द्र जी ने अन्त समय तक यही यत्न किया कि वह सीता जी को लाकर क्षमा प्रार्थना करले, तो उसे क्षमा दीजाये परन्तु खेद कि उस अदूरदर्शी की समझ में कुछ भी न आया, जिसका फल यह हुआ कि आज भूमण्डल में उनके नाम मात्र शेष रह गये हैं ॥

पवन-हाहा ! एक वह समय था कि जब बड़े २ राजा महाराजा इस के आगे सिर झुकाते थे और वह बड़े अभिमान की दृष्टि से उनकी ओर देखता था, आज उसका नाम लेवा भी नहीं दखिता हा खेद ! जब से अत्याचारों के मन पर काम प्रबल आया तब से प्रतिष्ठा भंग होने लगी और ऐश्वर्य्य भी घटता गया ॥

पाठकगण ! जब लग अरुणोदय न हुआ तब तक इन लोगों की वार्त्तालाप निरन्तर होती रही ॥

५७वां, अध्याय।

समस्त देशों से बढ़गया।

अब वह समय है कि हनुमान की वीरता का चर्चा घर घर हो रहा है, उनकी जगदुपकार और सर्व हितकारिता की प्रसिद्धि सब वानरद्वीप में फैल गई, यद्यपि पवनजी ने अतीव यत्न किया और बहुतेरा चाहा कि राज्यभार उनको दिया जावे परन्तु हमारे महावीर ने अपनी प्रबल वाक्शक्ति शक्ति से इस बात पर उनको प्रसन्न कर लिया कि वह स्वतंत्रता पूर्वक जीवन व्यतीत करें और विशेष कार्य्य में एक स्थान बंधे न रहे, पाठक गण! वानरद्वीप देश का कोई भाग ऐसा न होगा जहां इसकी वीरता का धमका न मच गया हो, किस की सामर्थ्य थी जो किसी दुर्बल पर अत्याचार कर सके या किसी दीन को निष्कारण सता सके। यद्यपि बहुत से राजा उस देश में थे परंतु सब के सब इस राजधानी के आधीन थे प्रजा सब प्रसन्न थी कोई भी किसी प्रकार की पुकार नहीं करता था क्योंकि किसी को यह सामर्थ्य न थी कि दुर्बल को सता सके॥

यदि तनिक भी किसी के मन में अत्याचार या दुष्कर्म्म का बीज उत्पन्न हुआ तो तात्काल ही रावण की दुरवस्था का चित्र उस की आखों के सामने भयानक

रूप धारण कर आगया मन कांप उठा हृदय भय भीत हो गया और स्वयं इस के हृदय से यह बीज दूर हुआ और यह विचार उत्पन्न हुआ :—

यदि मेरे इस दुराचार की खबर निकली तो मेरी भी वही दशा होगी जैसे कि रावण की ॥

सार यही है कि हमारे वीर के समय में वानरद्वीप का देश समस्त दक्षिणी देशों से बढ़गया और सब प्रजा आनन्द पूर्वक निवास करने लगी ॥

चौपाई

देश सुखी भा अतिशय भारी,
ऋद्धि समान नहि विचारी ।
धन योवन सम्पद सुख नाना,
सकल प्रजा आमद मनमाना ।
प्रीति प्रेम अरु धर्म्म विचारा,
सब प्रकार भया देश सुखारा ।

पाठकगण ! दक्षिणी भारत की तो यह दशा थी और उत्तरी भारत में महाराजा रामचन्द्र जी का डंका बज रहा था सार यह है इस समय भारत के भाग्य का नक्षत्र पूर्ण रूप से प्रकाशित हो रहा था, वेद और शास्त्रों की मर्यादा प्रचलित थी किसी के विचार में भी न था कि यह समय भी भारत को देखना पड़ेगा, जब कि इससमयकी

प्रतिष्ठा, वीरता और साहस को सुन कर अन्य देशनिवासी इन्हें ईर्षा से झूठा और कपोल कल्पित मानने लगेंगे और भारत निवासी धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म मानेंगे पाठकवृन्द ? देखिये यह वही सुभाग्य का समय था कि जिसमें विधाता को भी इस अपने बाग में ऐसे २ पेड़ लगाने स्वीकार थे, जिनके पुष्पों की गन्धि से आज लाखों वर्ष व्यतीत हो जाने परभी भारतवर्ष महक रहा है और उन फूलों का ध्यानकरने से सेवती के सुगन्धि पुष्पों की गन्धि के समान मन प्रसन्न हो जाता है; इस लेख में फूलों से हमारा तात्पर्य हमारे वह प्राचीन ऋषि मुनिशूरवीर और महात्मा हैं, जिन्हों ने हमारी मार्ग द्रष्टता के अर्थ एक से एक बढ़ कर काम किये आप लक्ष बनकर दिखाया, तो प्रिय भ्रातृगण ! हमारी लेखनी को सामर्थ्य नहीं कि हम उन फूलों की मुर्झाई हुई मूर्ति आप को यथावत रूप में दिखाने का यत्न करें और न ही हमारे में यह कहने की सामर्थ्य है कि वह प्रकृति नियमों के हस्ताक्षेप से बाहिर थे, नहीं ? कदापि नही ! वह भी इसी प्रकार प्रकृति नियम बद्ध थे, जैसे कि हम और आप हैं। हां यदि कुछ अंतर है तो यह कि हम स्वार्थी आत्मश्लाघी और लोभी हैं और वह इन बातों से रहित थे और यही कारण है कि आज लाखों वर्ष व्यतीत होजाने पर भी भारत वासियों को उनसे अपने प्रिय बंधु वर्ग से भी अधिक प्रेम है, उनके जीवन वृत्तान्त सुन

कर रुधर खोल उठता है, तो आपही कहें कि यह दास किस प्रकार उनके रूप का चित्र खेंच सकता है, जिन की पवित्र आत्मायें आज लग हमको निश्चय दिलाती हैं कि भारत देश सब देशों में अग्रण्य था और अब भी रह सकता है यदि हम उन ऋषिमुनियों के सच्चे अनुयायी बनें और शूरवीरों के कर्त्तव्यों पर आचरण करें, जैसे कि देखिये हमारे नावल का वीर हनुमान यद्यपि इस समय वृद्ध प्रतीत होता है, तथापि इसके प्रताप और मुखशोभा में किंचित परि वर्तन नहीं हुआ वरु उसी प्रकार कुन्दन के समान चमक रहा है, देखिये कैसे छाती ताने वृद्ध सेनापति धुन्दवीर से खड़े २ मुसकराकर बातें कर रहा है, एक हाथ से शत्रु हृदय विदारक गदा को हिला रहा है, दूसरे हाथ से मुछों को सुधार रहा है, जिस को देख हमारा साहस ही नहीं पड़ता, कि किंचित मुख खोलें इस लिये दूर से ही प्रणाम कर आज्ञा मांगते हैं, और अपने मान्यवर्य पाठकगण से विनय पूर्वक प्रार्थना करते हैं कि यदि कोई अशुद्धि इस क्षुद्र कृति मे होतो दास को सूचित कर अनुग्रहीत करें, यहां अनुवाद कर्त्ता भी इस प्रार्थना से रुक नहीं सकता कि यदि किसी प्रकार ग्रन्थकर्त्ता के आशय का यथार्थ रूपसे प्रकट करता हुआ [illegible]न्य अशुद्धि रह गई हो तो कृपा पूर्वक क्षमा कर सूचित करें। जिस से पुनरावृत्ति में वह त्रुटि न रहे ॥

समाप्ति